



साधु और वेश्या

साधू और वेश्या

(सुन्दर शिक्षाप्रद सामाजिक उपन्यास)

मूल लेखक

पण्डित कृष्णप्रसाद कौल

सदस्य, सर्वेण्ट्स आफ़ इण्डिया
सोसाइटी, लखनऊ

अनुवादक

पण्डित ब्रजकृष्ण गुर्टू

प्रकाशक

लीडर प्रेस, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण } १९३० { मूल्य १)

निवेदन

मुझको इस पुस्तक के लिखने का विचार एक विलायती उपन्यास के पढ़ने से उत्पन्न हुआ था। इस पुस्तक में उसी विचार की पैरवी और उसी चित्र के खींचने का प्रयत्न किया गया है, जो उस उपन्यास का विशेष गुण है। परन्तु मेरी पुस्तक न उस विलायती उपन्यास का अनुवाद है, न उसका खुलासा।

—कृष्णप्रसाद कौल



साधू और वेश्या

(१) साधू

हरिद्वार के पंडों और पुजारियों, साधू-महन्तों और बैरागियों के अतिरिक्त बहुत से साधू-सन्तों ने हृषिकेश और लक्ष्मण झूले के आस-पास के जंगलों में गंगा किनारे अपनी कुटियाँ बना रक्खी हैं, जहाँ ये सत्पुरुष सांसारिक जंजालों की धूल अपने वस्त्रों से झाड़ कर शान्ति और ईश्वर की याद में अपना जीवन व्यतीत करते हैं। बाँस और खपच्ची, सिरकी और सरकंडे से उन्होंने अपना घरौंदा बनाया है तथा घास और पत्तों से उस को सुसज्जित किया है। डंड, कमंडल, मृगछाला और एक कम्बल ही उन की सम्पत्ति है। वे केवल एक गेरुवा वस्त्र शरीर से लपेटे धूनी रमाये बैठे रहते और भगवत् भजन में लिप्त और मग्न रहते हैं। भूख और प्यास को उन्होंने इस प्रकार बस में कर लिया है, कि जब कभी बाजरे की रोटी और साग मिल गया, तब ख़ुशी-ख़ुशी उस से ही पेट भर लिया। न मिला, तो जौ की रोटी ही नमक के साथ खा ली, और परम पिता का धन्यवाद किया। यह भी न मिला, तो जंगल में कुछ फल-फलारी रूखा-सूखा जो कुछ भी मिल गया, उसी पर संतोष किया।

त्याग इन का पहला सिद्धान्त है। शरीर को कष्ट पहुँचाना एवं इन्द्रियों का दमन करना इन का कर्त्तव्य है। प्रति क्षण

पापों से तोबा करना और एकान्त में ईश्वर से प्रार्थना करते हुए सर नवाना और नाक रगड़ना इन का धर्म है। न गरमी, बरसात और जाड़े की शिद्दत इन को हानि पहुँचाती है, न जंगल के जानवरों और जन्तुओं का ही इन्हें कोई भय है। इन का समय पूजा-पाठ करने, माला फेरने, संध्या-बन्दन करने और समाधि लगाने में ही व्यतीत होता है। न इन को दिखावे की चिन्ता है और न सम्पत्ति की चाह ; न आनन्द-सुख की इच्छा है, न नातेदारों या मित्रों से प्रयोजन व संसार के जंजाल से सम्बन्ध। यदि कोई धुन है, तो बस यही कि किसी प्रकार इन की प्रार्थना ईश्वर सुन ले, और इन के पापों को क्षमा करे तथा संसार के आवागमन से छुट्टी मिले और जिस की भक्ति में ये डूबे हुए हैं व जिसके दर्शनों के लिए तरस रहे हैं, उस में मिल जावें। उन के परिश्रम व चमत्कार की कहानियाँ दूर दूर तक प्रसिद्ध हैं और इनके चमत्कारों की चर्चा जनता की ज़बानों पर है।

कहा जाता है, एक साधू भिक्षा माँगता हुआ एक मुहल्ले से जा रहा था। एक दीन विधवा के दरवाज़े पर उसने सवाल किया। यह बेचारी चरखा चला, सूत कात कर कठिनता से अपना और अपने बच्चों का पेट पालती थी। वह बच्चों को खाना खिलाकर पीतल की थाली में साग और रोटी लेकर खाने को बैठ ही रही थी, कि, उसने साधू को सवाल करते सुना। उसने साधू की आव-भगत की और बड़ी श्रद्धा के साथ उसको चौके में बिठला कर अपने भोजन की थाली उसके आगे रख दी। जब साधू ने देखा कि उसने अपनी थाली सामने रख दी, तो साधू ने पूछा कि माई, तू क्या खायेगी? उसने उत्तर दिया, चबैना ले आऊंगी। साधू साग और रोटी खा यह कह कर कि "माई,

ईश्वर तेरा भला करेगा !" चलता हुआ। यह स्त्री जब चूल्हा और चौका लीपने लगी, तो चूल्हे का राख में अशर्फ़ियों का एक ढेर निकला और वह मालामाल हो गई ।

एक धनवान पुरुष का इकलौता बेटा युवावस्था में किसी असाध्य रोग में ग्रस्त हो गया था। औषधि से भी उसे लाभ न हुआ। डाक्टरों, हकीमों, और वैद्यों ने रोग को असाध्य बता कर जवाब दे दिया। किसी ने उस धनिक से कहा, कि गंगा किनारे एक पहुंचा हुआ साधू धूनी रमाये बैठा है, उसकी शरण में जाओ। क्या आश्चर्य है, शायद बच जाये। 'मरता क्या न करता' धनिक अपने लड़के को लेकर साधू के पास पहुँचा, और उसके चरण छुए। साधू ने रोगी के सिर पर हाथ फेरा और थोड़ी सी भभूत माथे पर लगा दी। एक सप्ताह में हो रोग में कमी होनी आरम्भ हुई और दूसरे सप्ताह में रोग जाता रहा। तीसरे सप्ताह में लड़का चलता-फिरता नज़र आया।

एक उदाहरण यों है कि किसी साधू ने एक बड़े नामी सेठ के दरवाज़े पर रोटी के टुकड़े का सवाल किया। सेठ साहब उस समय किसी व्यापारी से कोई बड़ा मामला तै कर रहे थे। साधू का बोलना उन्हें बुरा लगा। रुष्ट होकर उन्होंने उत्तर दिया— "दूर हो"। साधू ने कहा, — "इतने बड़े सेठ होकर एक रोटी के टुकड़े के सवाल को रद्द करते हो।" सेठ जी बिगड़ उठे और उसे गालियां देने लगे। साधू ने कहा—"लेना एक, न देना दो; बाबा! गालियां क्यों देता है।" सेठ जी ने नाक भौं चढ़ा कर नौकरों को आज्ञा दी, कि "इसको धक्का देकर दरवाज़े के बाहर करो।" साधू ने चलते चलते कहा—"हम तो जाते हैं बाबा! परन्तु तूने जैसा हमारा दिल दुखाया है वैसे ही ईश्वर तेरा दिल दुखायेगा।" साल भर के अन्दर ही सेठ जी का कारोबार ऐसा नष्ट हुआ कि

रोटियों तक को मोहताज हो गये और मृत्यु ने सारा वंश नाश कर दिया।

इन साधुओं की प्रकृति और चमत्कारों का मनुष्यों के हृदयों पर ऐसा प्रभाव है कि प्रत्येक जरूरत वाला आदमी इनकी खोज में रहता है और प्रत्येक पापी, विषयी और दुराचारी इनके नाम से डरता है। इनकी प्रकृति और शक्ति का इतना प्रभाव है कि मनुष्य तो क्या, हिंसक जन्तु तक इनसे आँख नहीं मिला सकते, यहाँ तक सुना गया है कि हिंसक जन्तु—रीछ, भेड़िये, तेन्दुए और चीते जंगलों में चक्कर लगाया करते हैं, परन्तु इनकी कुटियों में घुसने या इनको पीड़ा पहुँचाने का साहस नहीं रखते।

एक दिन एक सिंह चिंघाड़ता हुआ साधू की कुटी की ओर लपका। साधू ने निगाह उठा कर व्याघ्र की तरफ़ देखा, तो वह सकते में आकर जहाँ था, वहीं ठहर गया। जब साधू ने संकेत किया, तो भीगी बिल्ली की तरह आगे बढ़ा और साधू के चरणों में जाकर लोट गया। साधू ने उसके सर पर हाथ फेरा, चुमकारा। थोड़ी देर बाद फिर इशारा किया, तो वह चुपचाप उठ कर चला गया।

साधू-सन्तों के इसी समूह में एक सज्जन सन्त सांईदास थे। सांईदास संस्कृत के विद्वान, वेद-शास्त्र और फ़िलासफ़ी के ज्ञाता तथा पहुंचे हुए लोगों में से थे। उनकी उम्र योग, उपदेश और सत्कार्य्यों में ही व्यतीत हुई थी। उन्होंने बाईस वर्ष तक संस्कृत और फ़िलासफ़ी की शिक्षा पाई थी। उसके बाद वे संस्कृत कालेज, काशी, में प्रोफ़ेसर रहे। पैंतालीस वर्ष की अवस्था में जब लड़के-बाले बड़े हो गये, वे गृहस्थी छोड़ कर वानप्रस्थ हो गये और २५ वर्ष वेद और शास्त्र के अध्ययन, योग की साधना और घोर-तपस्या में व्यतीत किये। ७० वर्ष की अवस्था में उपदेश और

प्रचार का कार्य आरम्भ किया। तीस वर्ष इस प्रकार व्यतीत करके सौ वर्ष की अवस्था में हरिद्वार, हृषिकेश से भी आगे बढ़ कर श्री बद्री-केदार की राह के किसी जंगल में एक पर्वत की कन्दरा में बैठ कर समाधि लगाई और १०५ वर्ष की अवस्था में चोला छोड़ा। इनके शिष्यों की संख्या सैकड़ों तक पहुँच चुकी थी। हरिद्वार, हृषिकेश, कनखल, ज्वालापुर और आस-पास के साधू-सन्तों ने इन्हीं से गुरु-मंत्र लिया था। इनका नाम दूर दूर नगरों में प्रसिद्ध था।

जिस समय की यह कहानी है, उसी समय सन्त साईंदास उपदेश और प्रचार का काम समाप्त कर हृषिकेश छोड़ कर किसी खोह में समाधि लगाये हुए बैठे थे। बुढ़ापे व तपस्या ने इनकी यह दशा कर दी थी, कि इनके शरीर पर माँस का केवल नाम ही नाम था। हड्डियों का एक ढांचा रह गया था। जटाएं बढ़ कर कमर से नीचे तक पहुँच गई थीं। भौं के सफ़ेद बालों ने आँखों को ढक दिया था। पलकें बहुत बढ़ गई थीं। दाढ़ी के बाल नाभि से नीचे पहुँचते थे। हाथों और पैरों के नाख़ूनों की सूरत बाज के पंजों की सी थी। हाथ बिलकुल सूख गये थे। पैरों में जा-बजा ज़ख़्म हो गये थे, परन्तु कमर में ज़रा सा भी झुकाव न था। जब खड़े होते तो सीधे और चलते तो पैर जमा कर और मुख से वह ऐश्वर्य्य बरसता था कि देख कर अचम्भा होता था।

यों तो जैसा वर्णन किया जा चुका है, सन्त साईंदास के शिष्यों की संख्या बहुत थी, परन्तु इनमें से दो विशेष प्रकार से योग्य थे। एक भक्त ईश्वरदास और दूसरे स्वामी रामानन्द। भक्त ईश्वरदास बहुत सीधे और सुहृदय फ़क़ीर थे। ये पढ़े-लिखे न थे, परन्तु ईश्वर-भक्ति में इनका हृदय प्रफुल्लित रहता था और ये सदा भगवत्-भजन में लीन रहते थे। स्वामी रामानन्द वेद और शास्त्र

के ज्ञाता थे तथा उपदेश और प्रचार करते थे। उनकी प्रसिद्धि का मुख्य कारण यह था कि यह बड़े तपस्वी थे। तीन तीन रोज़ व्रत रखना और निराहार रहना उनके लिये साधारण बात थी। अत्यन्त गरमी में अग्नि तापना और चिल्ले जाड़े में केवल एक लंगोटी लगाये और भभूत रमाये नग्न रहना उनके लिये सहज काम था। ईश्वर के ध्यान में अपने अपराधों को क्षमा कराने के लिए घंटों साष्टांग दंडवत करते और माथा-नाक यहां तक रगड़ा करते कि उनके माथे और नाक में बड़े २ काले गड्ढे पड़ गये थे। कांटेदार कमचियां जा-बजा शरीर पर मारा करते, जिससे शरीर के सब भाग थोड़े बहुत ज़ख्मी हो गये थे। संक्षेप में यह, कि उनका बहुत समय अपने पापों का स्मरण करने, शरीर को कष्ट पहुँचाने, इन्द्रियों की इच्छाओं से संग्राम करने काम ; क्रोध, लोभ, मोह को बस करने में व्यतीत होता था और इसी कारण सन्त साईदास के चेलों में स्वामी रामानन्द की बड़ी पदवी थी। स्वयं स्वामी रामानन्द के इक्कीस शिष्य थे, जो उनके क़दम ब क़दम प्रयत्न करते और सत्कार्यों में अपना समय व्यतीत करते थे। इनमें से कुछ ऐसे थे, जिनका काम चोरी करना और डाका डालना था। कुछ तो बड़े जुवारी और दुराचारी थे, परन्तु स्वामी रामानन्द के उपदेशों ने इनको ऐसा सुधारा कि यह अब साधू हो गये थे और भगवत्-भजन में अपना समय बिताते थे। स्वामी रामानन्द के चेलों में कृष्णाचार्य की पदवी ऊँची थी और वह उनके मुख्य चेले समझे जाते थे। यह बड़े अच्छे उपदेशक थे, परन्तु इनमें से जिस मनुष्य की आत्मा निष्पाप थी, वह आस-पास का एक किसान था। उसका नाम ऊधो था। यह बड़ा सीधा, साधु और ईश्वर का सच्चा भक्त था। अपने साथियों में यह सब से अधिक मूर्ख समझा जाता था और सब साधू इसको हँसा करते थे, परंतु

ईश्वर की उस पर असीम कृपा थी। उसको स्वयं भगवान् दर्शन देते थे और वह जिसको जो कह देता था, वह होकर ही रहता था।

आकाश पर देवताओं और दैत्यों की पुरानी शत्रुता चली आती है, क्योंकि स्वर्ग में देवताओं की पदवी बड़ी है। वे ईश्वर को प्रिय हैं और हर बात में उनकी सुनवाई होती है। इसके विरुद्ध दैत्यों से ईश्वर प्रसन्न नहीं थे, परन्तु यह भी अपनी शरारत से बाज़ नहीं आते और देवताओं को तरह तरह से दुखी करते हैं। जो साधू, सन्त या मुनि अपनी तपस्या और भक्ति से ईश्वर को प्रसन्न करने में सफल होते हैं, उनको स्वर्ग में बड़ी पदवी मिलती है और उनकी गिनती देवताओं में होने लगती है। इस कारण दैत्यों को सदा यह चिन्ता रहती है कि कहीं देवताओं की संख्या-वृद्धि हुई, तो इस परस्पर के युद्ध में देवताओं की शक्ति बढ़ जायगी और एक दिन ऐसा आएगा कि दैत्यों को हार माननी पड़ेगी। इसलिए इन्होंने यह जुगत निकाली कि साधुओं और सन्तों की तपस्या को भंग किया करें। इसलिए यह दुरात्माएं कभी मनुष्य और कभी पशु के रूप में साधुओं और सन्तों में विचरा करती हैं ताकि उनको बरग़लाने में सफल हों, उन की तपस्या और भजन को भंग करें। साधू और सन्त भी इस भय से सदा चौकन्ने रहते हैं और तपोबल से दैत्यों की दाल नहीं गलने देते और बुरी रूहों को अपने समीप नहीं आने देते। परन्तु कामदेव जब इन्हें सताता है तब इनकी दशा कठिन होती है, और उस समय घोर संग्राम होता है। तपोबल से ज़्यादातर यह अपनी इच्छाओं को दमन करने में सफल होते हैं। स्वामी रामानन्द अपने समय को तप करने, भागवत पुराण अध्ययन करने और अपने शिष्यों को उपदेश देने में बिताते थे और यद्यपि इन की

अवस्था अधिक नहीं थी, परन्तु इन के तप में इतना बल था कि बुरी रूहें इनके पास फटकने नहीं पाती थीं। चाँदनी रात में बहुधा चार पांच सियार इनकी कुटी के दरवाज़े पर चुपचाप आकर बैठ जाते थे। जनता को यह विश्वास था कि वे बुरी रूहें हैं, जो साधू का तप भंग करने को भेजी जाती हैं, परन्तु तप के प्रभाव से उन की हिम्मत कुटी की चौखट लाँघने की नहीं होती।

स्वामी रामानन्द देहली के एक अच्छे अमीर घराने के थे। अंगरेज़ी और फ़ारसी में उन्होंने साधारण शिक्षा पाई थी। समय के अनुसार रहन-सहन और वस्त्रों से अमीरी टपकती थी और सुख और आनन्द से ज़िन्दगी बसर करते थे। उनके विचार भी आज कल के युवकों के से थे। धार्मिक और आत्म-ज्ञान की बातों को हँसी में टाल देते थे। यहां तक कि शास्त्रार्थ में विधर्मियों की सी ही बातें करते थे। इत्तिफ़ाक की बात २५ वर्ष की अवस्था में उन का पांच वर्ष का पुत्र, जिस को उन्हों ने बहुत लाड़ और प्यार से पाला था और जो सदा उनके साथ रहता था, तीन दिन बीमार रह कर इस संसार से चल बसा। इस सदमे ने उनकी काया पलट कर दी और उनके विचारों में परिवर्तन होने लगा। इन्हीं दिनों यह हरिद्वार पहुँचे और सन्त सांईदास के उपदेशों से प्रभावित हुए। कुछ दिन साधुओं के सत्संग में रहे। कभी देहली रहते और कभी हरिद्वार। साधुओं के सत्संग और सन्त सांईदास के उपदेशों ने कुछ ऐसा चमत्कार किया कि साल भर के अन्दर ही ये घर-बार त्याग कर साधू हो गये। स्वामी रामानन्द बहुधा अपने चेलों से अपना पुराना हाल कहा करते और कहते—"इस संसार रूपी माया ने मेरी आँखों पर कुछ ऐसा परदा डाल रक्खा था कि मैं भोग-विलास में पड़ कर अन्धा हो रहा था। जब मुझे उस ज़िन्दगी का ध्यान आता है, तो मेरे रोंगटे खड़े होने लगते हैं और

मैं लज्जा के मारे गड़ने लगता हूं।" परन्तु पिछले दस वर्ष में उन्हों ने अपनी काया को हर तरह का कष्ट देकर और कठिन तपस्या कर के अपने पापों को धो डाला था और मन ही मन वह अपनी तपस्या और परिश्रम पर अभिमान करते थे।

एक दिन स्वामी रामानन्द साधारण रूप से अपने चेलों से अलग अपनी कुटी में शान्ति से मग्न बैठे, अपनी उस समय की ज़िन्दगी का ध्यान करके, कि जब वह ईश्वर को भूले हुए थे, प्रार्थना और विनय कर रहे थे। वह अपने अपराधों को एक एक कर के गिन के हर बार विनय पूर्वक ईश्वर से क्षमा-प्रार्थी हो रहे थे कि सहसा उनको सुन्दरी नामक उस वेश्या का ध्यान आया, जिसको उन्होंने देहली की एक नाटक-मंडली में नाच और ऐक्ट करते देखा था। उन को सुन्दरी के हाव-भाव, उसकी मन हरने वाली मुसकान, उसकी मद-भरी चाल व प्यारी-प्यारी सूरत याद हो आई और ख़याल आया कि वह अपनी जादू-भरी चितवन से देख कर एक बार ही बीसियों मनुष्यों को घायल करके किस उदासीनता से उनसे शोख़ियां करती और उनको ठुकराती थी, तो उनके नेत्र क्षण भर के लिए चौंधिया गये। इसके अनन्तर जब उन्होंने यह ख़याल किया कि उस एक स्त्री ने न मालूम कितने मनुष्यों की ज़िन्दगियां ख़राब कर दी और उनको नरक की यात्रा कराई, तो उनका हृदय करुणा से भर गया। सुन्दरी ने उसी काल में स्वामी रामानन्द को भी अपनी चितवन का शिकार बनाया था और यह यहाँ तक मजबूर तथा ऐसे मोहित और मस्त हो गये थे कि एक दिन उसके द्वार तक पहुँचे, परन्तु कम अवस्था (उस समय यह केवल १६ वर्ष के थे) और कम-साहसी और कुछ धन के अभाव (उस समय उनके पिता रुपया-पैसा नहीं देते थे) ने उनके पैर द्वार पर ही

रोक दिये और यह वापस चले आये। ईश्वर ने, जो दयावान और सर्व-शक्तिमान है, उनकी अवस्था पर तरस खाया और उनको घोर पाप से बचाया। यह तो उस समय ईश्वर को बिलकुल भूले हुए थे। अनुग्रहीत न हुए, परन्तु अब जब उनकी आँखें खुल चुकी थीं और यह ज्ञान हो चुका था, कि यह संसार मिथ्या और माया जाल है, तब उन्होंने उस पाप के लिए फिर से तोबा की और ख़याल करने लगे कि उस वेश्या ने अपनी चितवन के जादू और हाव-भाव से उनको कैसा अन्धा कर दिया था कि वह उस घोर पाप को जीवन का सुख समझते थे। स्वामी जी को अपने पापों को गिनते गिनते और सुन्दरी का ख़याल करते करते जब कई घंटे बीत गये, तो सुन्दरी का चित्र उनके सामने अंकित हो गया। वही मोहिनी सूरत, वही हाव-भाव, वही उठती हुई जवानी, मस्त आंखें जैसी रामानन्द ने पहले दिन देख कर होश-हवास खो दिये थे, उस समय भी स्वामी जी की नज़रों के सामने फिर गई और सुन्दरी इस प्रकार सोफ़ा पर बैठी दिखाई दी कि उसके शरीर का प्रत्येक अंग उस आबरवां के दुपट्टे में से, जिसे वह अपने आधे शरीर पर उदासीनता से डाले हुई थी, साफ़ झलक रहा था। उसके नेत्र यौवन के मद से झुके जा रहे थे। दिल के धड़कने से सीने के उभार में एक प्रकार की हरकत हो रही थी। होंठों पर हलकी सी उदासी थी, और सांस लेती हुई नाक के नथनों में जुम्बिस होती थी। ऐसा विदित होता था कि वह अपने अकेलेपन से उकता रही है। इस दृश्य को देख कर स्वामी रामानन्द ने बेताबी की दशा में ईश्वर से प्रार्थना की—"हे ईश्वर! तू सर्व-व्यापी है। मैं अपने अपराधों को क्षमा चाहता हूं। मेरे अपराध क्षमा कर।" इसके अनन्तर चित्र में परिवर्तन प्रतीत होने लगा। सुन्दरी के मुख पर उदासी

छाई हुई मालूम होने लगी। उसके होंठ इस प्रकार कांपने लगे, जैसे वह किसी कष्ट में ग्रसित हो। वह न केवल उदास परन्तु भयभीत भी प्रतीत होने लगी। सुन्दरी को इस दशा में देख कर रामानन्द का हृदय दहल उठा और उनकी आत्मा काँपने लगी। पृथ्वी पर लोट कर, माथा रगड़ कर उन्होंने प्रार्थना की--

"हमारे अपराधों को क्षमा करने वाले दयावान ईश्वर! तू ने ही हमारे कठोर हृदयों में दया के भाव उत्पन्न किये हैं। मैं तेरी स्तुति करता हूं और प्रार्थना करता हूं कि इस दया के भाव को ऐसी ओर न लगा कि जिस से तेरे सेवक को लज्जित होना पड़े। ऐसा कर कि मेरे प्रेम की तरंग तेरी ओर रहे, क्योंकि तू ही सदा से है और सदा रहेगा। यदि मेरे हृदय में इस स्त्री की चाह है, तो इस ही कारण कि यह तेरी रचना है। देवता भी इस पर दया करेंगे। ईश्वर! ऐसा कर कि वह अपने किये पर लज्जित हो और घोर पाप से मुख मोड़े। मेरे हृदय में उस के लिये इस कारण दया आती है कि उस के पाप महान हैं जिनका ध्यान आते ही मेरे शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जब मैं सोचता हूं कि नरक लोक में जाकर वह अपने पापों का फल भोगेगी, तब मुझे रोना आता है। हे ईश्वर, मुझे ऐसा बल दे कि मैं इस स्त्री को पाप की राह से हटा कर तेरी ओर लगा सकूं।"

स्वामी रामानन्द इस उधेड़बुन में लगे हुए थे। सहसा उन्हों ने देखा कि एक स्यार उनके चरणों पर पड़ा उनके पैर चूम रहा है। यह देख कर उन्हें बड़ा ही आश्चर्य हुआ, क्योंकि उनकी कुटी का द्वार आज सुबह से बराबर बन्द था। स्यार ने स्वामी जी को अचंभे में देखकर कुत्ते की तरह दुम हिलानी आरम्भ कर दी। स्वामी जी ने आंखें बन्द करके 'ओं हरी नारायण' 'ओं हरी'

के शब्द मुंह से निकाले, तो सियार तुरन्त अदृश्य हो गया। स्वामी जी को विश्वास हो गया कि उस दिन पहली बार किसी दुष्टात्मा ने उनकी कुटी में प्रवेश किया। उन्होंने फिर थोड़ी देर ईश्वर से प्रार्थना की और फिर सुन्दरी का ध्यान कर आप ही आप कहने लगे—"ईश्वर की कृपा होगी, तो मैं उस को इस महान पाप से बचा ही कर रहूंगा।" यह कह कर ही स्वामी जी सो गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल उठ कर, और पूजा-पाठ करके स्वामी रामानन्द भक्त ईश्वरदास के पास गये। जब स्वामी जी पहुँचे, तो भक्त जी साधारण प्रकार से फावड़ा लिये अपनी क्यारियों को गोड़ रहे थे। भक्त ईश्वरदास बुड्ढे आदमी थे, और उन्हों ने अपनी कुटी के सामने कुछ फूलों की और कुछ तरकारियों की क्यारियाँ बो रक्खी थीं। जो कुछ फूल-पत्र क्यारियों में निकलते थे, पूजा के समय ठाकुरों पर चढ़ते थे और खीरा, ककड़ी या सरसों का साग जो कुछ होता यह रोटी के साथ खाते। जंगल के जीव-जन्तु भक्त जी से ऐसे हिले हुए थे कि इनकी कुटी में सहज ही चले आते और इनके तलुवों और हथेलियों को चूसते और चाटते थे। परन्तु बुरी आत्माएं भक्त जी की कुटी से दूर रहतीं और उन को कभी न सतातीं।

भक्त जी फड़वे के सहारे से खड़े ही गये और बोले "नारायण हरी, स्वामी! नारायण हरी।"

स्वामी रामानन्द—"नारायण हरी, भक्त जी, आनन्द?"

भक्त जी मस्तक का पसीना पोंछ कर बोले,—"आनन्द, महाराज, आनन्द; कहो कैसे दर्शन दिये?"

स्वामी रामानन्द—"ईश्वर की सेवा की एक बात ध्यान में आई, तो हम ने कहा भक्त जी से यही चल कर पूछा चाहिये क्या कहते हैं?"

भक्त ईश्वरदास—“ईश्वर की इच्छा होगी तो स्वामी का विचार पूर्ण होगा। ईश्वर बड़ा दयालु है। देखो सरसों कैसी फूल रही है। यह उसी की कृपा है। चने, मटर भी निकल रहे हैं। बस, इसी से नारायण का भोग लगेगा और आनन्द रहेगा। साधू-सन्तों के तो बस चार ही बैरी हैं—काम, क्रोध, लोभ और मोह। यदि इन से बच सके, तो बस आनन्द ही आनन्द है। ईश्वर की कृपा होती है, तो इन दुष्टों को जीत लेते हैं और फिर आनन्द ही आनन्द आता है। फिर, हां, आप तो स्वामी जी, ईश्वर की सेवा की वार्तालाप करने आये थे। वह तो मेरे चित्त से ही उतर गई। कह डालो?”

स्वामी—“है तो ईश्वर की ही सेवा को वार्तालाप। भाई भक्त जी, आप सज्जन हैं और आप का हृदय निर्मल है। जो उचित समझो कहो, क्योंकि हम को आप में बहुत विश्वास है।”

भक्त—“भाई रामानन्द जो, मैं तो आप के चरणों की धूल लेने के योग्य नहीं, पापी आदमी हूं, पर बूढ़ा हूं। बूढ़े आदमी की समझ जैसी कुछ होती है, वैसी बात बता सकूँगा। आप कहिये तो।”

स्वामी—“भक्त जी, दिल्ली नगर में एक सुन्दरी वेश्या है जिसने अपना जीवन महान पापों से नष्ट कर रक्खा है और जनता को भी पापों में डुबोती है। इससे अपने को बड़ा शोक है।”

भक्त—“आप का कहना उचित है। ऐसे अत्याचार पर तो शोक करना ही चाहिए, पर शहरों में तो अनेक पापी बसते हैं। तो आपने उसका कोई उपाय सोचा है?”

स्वामी—“हमने यह सोचा है कि दिल्ली जाकर इस स्त्री का खोज निकालें और इसको उपदेश देकर सीधी राह पर लायें,

ईश्वर की सेवा और भक्ति-मार्ग दिखायें। अपने ध्यान में तो यही बात आती है। कहो यह उचित है न ?"

भक्त—"आप का दास तो अनपढ़ और पापी पुरुष है, पर गुरु सांईदास कहा करते थे—साधू जहाँ बैठ गया वहाँ बैठ गया। अपना स्थान छोड़ कर दूसरी जगह जाना उचित नहीं।"

स्वामी—"तो आप इसको अनुचित समझते है।"

भक्त—"ईश्वर न करे कि मैं आपको निश्चय की हुई बात में बाधा डालूं, परन्तु गुरु सांईदास कहा करते थे—"यदि मछली को पानी के बाहर निकाल कर धरती पर डालो, तो मर जायगी। और वही दशा उन साधुओं की होती है, जो अपनी कुटी छोड़ कर देश और शहरों के मनुष्यों में चले जाते हैं, क्योंकि इन मनुष्यों में बुराई के सिवा कोई अच्छाई नहीं।"

यह कह कर भक्त ईश्वरदास ने फ़ड़वा संभाला और क्यारी खोदने लगे। इतने में सामने की झाड़ी में कुछ खड़का हुआ और एक मृग चौकड़ी भरता हुआ दिखाई पड़ा। पहले तो स्वामी रामानन्द को वहां खड़ा हुआ देख कर मृग बिचका और सहमा परन्तु फिर दौड़ कर भक्त ईश्वरदास की टांगों में लिपट गया और उनके हाथ चाटने लगा। भक्त ईश्वरदास ने मृग को देखकर ख़ुशी और प्यार के लहज़े में कहा—"आओ जीवात्मा ! आओ चले आओ।" यह कह कर भक्त जी कुटी की ओर चले और मृग उनके पीछे पीछे हो लिया। भक्त जी कुटी में से थोड़ी बासी रोटी निकाल लाये और अपने हाथ से मृग को खिलाई। इस समय स्वामी रामानन्द नीची गर्दन किये, धरती पर दृष्टि लगाये खड़े रहे। कुछ देर सोचा किये और फिर अपनी कुटी की राह ली। जो कुछ भक्त जी ने कहा था उसको सोचते और विचार करते हुए स्वामी जी जा रहे थे। घोर संग्राम उनके

हृदय में हो रहा था। कुछ समझ में नहीं आता था। सोचते सोचते स्वामी जी स्वयं बोले,—"भक्त ने बात तो ठीक कही। आदमी सूझ-बूझ का है और दूर दूर की कौड़ी लाता है। इसको मुझ में पूर्ण विश्वास नहीं है। पर सुन्दरी को घोर पापों के जीवन में पड़े रहने देना भी तो अन्याय है। ईश्वर! तेरा ही सहारा है, सीधा और ठीक रास्ता दिखा।" स्वामी जी इस उधेड़-बुन में अपनी कुटी की ओर जा रहे थे कि उन्होंने देखा कि किसी बहेलिये ने धरती पर जाल फैलाया हुआ है और एक मुर्ग़ी उस में फँस गई है। वह निकल नहीं सकती।

इतने ही में एक मुर्ग़ा आया और अपनी चोंच से जाल के फँदों को काटने लगा। स्वामी जी इस तमाशे को ध्यान पूर्वक देखते रहे। एक दम उन को विचार आया कि देखो मैंने ईश्वर से प्रार्थना की थी कि मुझ को ठीक और सीधा रास्ता दिखा। ईश्वर ने सुन ली। सुन्दरी माया रूपी जाल में फँसी हुई है। ईश्वर की मरज़ी है कि स्वामी रामानन्द इस जाल को जाकर काटे और सुन्दरी को जाल के फंदों से छुड़ाये। बस ठीक है। अब सोच विचार का काम नहीं; ईश्वर की मरज़ी मालूम हो गई। स्वामी जी यह कह कर पग बढ़ाने वाले थे कि उन्होंने देखा कि मुर्ग़ा जिस जाल को काट रहा था, उसके फंदे में स्वयं उसकी टांग फँस गई और वह टाँग छुड़ाने के लिये फड़फड़ाने लगा। यह देख कर स्वामी जी फिर डांवाडोल हुए और असमंजस में पड़ गये। स्वामी जी इसी धुन में लीन रहे और उन्हें रात को नींद नहीं आई। सुबह के समय उनकी आंख थोड़ी देर के लिये लगी, तो क्या देखते हैं कि सुन्दरी सामने उपस्थित है। परन्तु इस समय न पहली सी प्रतिभा है न आकर्षण। आबरवां के स्थान में एक काले कफ़न से सारा शरीर ढका

हुआ है केवल थोड़ा सा मुख दिखता था और आंखों से आंसू जारी थे। यह हृदय-विदारक दृश्य देख कर रामानन्द अधीर होकर रोने लगे। फिर विचार दृढ़ कर के उठे और अपना डंड-कमंडल सँभाला। कुटी का द्वार बन्द किया कि पशु कुटी में घुस कर भागवत पुराण को गन्दा और ख़राब न करें और बस, चल खड़े हुए। कृष्णाचार्य्य को बुला कर कुछ शिक्षा दी, कुछ हिदायतें कीं और चेलों को उन के सुपुर्द कर गंगा के किनारे की राह ली। स्वामी रामानन्द को दिल्ली की धुन समाई हुई थी और उन्होंने निश्चय किया था कि हरिद्वार से मेरठ और मेरठ से देहली पहुंचेगे। स्वामी को अपनी धुन में न दिन का धूप सताती थो, न रात का जाड़ा; और न रास्ता चलते चलते थकते थे। जब भूख बहुत सताती तो किसी झोपड़ी के द्वार पर खड़े होकर रोटी के टुकड़े का सवाल करते। कहीं से ललकार और गालियां मिलतीं, कोई बुरा-भला कह कर डांट देता। कोई सूखा टुकड़ा जैसे कुत्ते की ओर फेंकते हैं इनको देता। वह इस सब को सहन करते, सूखे टुकड़े को न्यामत जानते और अपनी राह लेते।

स्वामीजी ने इस बात की एहतियात रक्खी थी कि नगरों और शहर से बिलकुल दूर भागेंगे और जहां तक मुमकिन होगा, बस्ती से अलग अलग चला करेंगे, क्योंकि शहर और बस्ती में अकसर मन को लुभाने और साधुओं के भजन में बाधा डालने वाली, बहुतेरी चीज़ें मिलती हैं। सम्भव है, कहीं प्यारे प्यारे बच्चे खेलते-कूदते मिलें और वह भले मालूम होने लगें या कुए पर औरतें पानी भरती हुई हों और उनमें से कोई उनकी ओर देख कर मुस्कुरा दे या उसका आंचल खिसक जाय और ऐसी दशा में उनकी दृष्टि उस पर पड़ जाय। शहरों में हलवाइयों की

दूकानों में नाना प्रकार की मिठाइयों और पकवानों के ढेर लगे होते हैं। सम्भव है कि उन्हें देख कर मुख में पानी भर आये और दीन-ईमान सब धूल में मिल जाय।

ये संसार-त्यागी अपने धर्म और विश्वास की चादर पर चमत्कारों और परिश्रम का सुन्दर हाशिया लगाते हैं। वह जैसा ही सुन्दर होता है, वैसा ही मृदुल और कोमल भी होता है। जीवन के विषय-भोग और संसार चिन्ता की वायु जहां उसे लगी, उसका रंग फीका पड़ गया। इनका धर्म चिल्लू भर पानी में बह जाता है। इसी विचार के कारण स्वामी जी शहरों, नगरों और बस्तियों से दूर ही दूर रहते कि मनुष्य-जाति और भाई-बन्दों को देख कर कहीं इनका दिल पसीज न जाय। स्वामी रामानन्द को कहीं घना जंगल मिलता, तो कहीं हरे हरे खेत और उपवन दिखाई देते थे। कहीं किसी ग्राम के पास से निकलते तो लोगों की भीड़ मिलती, और किसी किसी दिन तो आदमी की शकल भी न दिखाई देती थी।

एक दिन यह किसी पुरानी नगरी के खंडहरों और वीरानों में से गुज़रे, तो एक बहुत ही शोचनीय दृश्य भी दिखाई दिया। परन्तु ये सुन्दरी की धुन में ऐसे मतवाले थे कि इन्होंने आँख उठा कर भी उस ओर न देखा। स्वामी रामानन्द इस प्रकार तीन सप्ताह रात व दिन चला किये। बाईसवें दिन ये एक गाँव होकर निकले। उसके बाद ये एक जंगल में पहुँचे, तो दूर से इनको एक छोटा सा झोपड़ा दिखाई दिया। यह विचार करके कि इस झोपड़े में कोई साधु रहता होगा, स्वामी रामानन्द उसके समीप गये। देखा, झोपड़ा, फूस, वृक्षों की छाल और झाड़ियों के कांटों का बना हुआ है और जा-बजा ख़राब भी हो रहा है। पृथ्वी पर घास बिछा कर बिछौना बनाया गया है। एक कोने में पानी

का घड़ा रक्खा है और दूसरी ओर जंगल के फल-फलारी घासपात पड़े हैं। जब झोपड़े में कोई न दिखाई दिया तो स्वामी जी इधर-उधर फिरने लगे। चारों ओर दृष्टि दौड़ाने पर उन्होंने देखा कि नदी किनारे एक अत्यन्त बूढ़ा मनुष्य, जो बिलकुल नग्न था और जिसके सर, आँखों, भवों, पलकों, हाथों और छाती के बाल सब सफ़ेद थे, आसन जमाये बैठा है। स्वामी जी उसे देख प्रसन्न हुए कि वह कोई पहुँचा हुआ साधू है। उन्होंने उससे बात चीत करनी चाही। शाम हो ही गई थी। रात का बसेरा भी यहीं हो जाने और रूखी-सूखी रोटी भी मिल जाने की आशा से समीप पहुँचे और उसका अभिवादन किया। उस मनुष्य ने कुछ भी उत्तर न दिया। स्वामी जी समझे कि साधू समाधि लगाये बैठा है या ईश्वर के ध्यान में मग्न है। वे स्वयं उसके समीप हाथ जोड़ कर बैठ गये।

जब अँधेरा होने लगा और देर हो गई और वह मनुष्य न उठा, तो स्वामी जी बोले—"बाबा, यदि तुम्हारा ध्यान पूरा हो गया हो तो, ईश्वर का नाम लेकर इस साधू को आशीर्वाद दीजिये।"

यह सुन कर उस मनुष्य ने गर्दन फेरी और स्वामी जी को ओर देख कर पूछा—"तू कौन है ? मैं तेरी बात नहीं समझता। मैं नहीं जानता कि ईश्वर कौन है ?"

रामानन्द (आश्चर्य से)—"क्या कहा ! तू नहीं जानता कि ईश्वर कौन है ? ईश्वर वह है, जिसने पृथ्वी और आकाश बनाया ; जिसने यह सब रचना रची। जिसका नाम हर मनुष्य की ज़बान पर है। ईश्वर ही का तो यह सब चमत्कार है और तू कहता है कि तू ईश्वर को नहीं जानता ! क्या यह सम्भव है ?"

बूढ़ा—"हां भाई ! यह भी सम्भव है।"

रामानन्द उस बूढ़े की मूर्खता और अज्ञानता को बातें सुन कर न केवल आश्चर्य करने लगे बल्कि उदास भी हो गये। उन्होंने पूछा—

"यदि तू ईश्वर को नहीं पहचानता, तो तेरा यह तप वृथा है और तुझे मोक्ष कभी भी न प्राप्त होगी।"

बूढ़ा—"कुछ करना या न करना दोनों बेकार हैं। जिये तो और मरे तो एक ही बात है।"

स्वामी—"क्या तू अमर नहीं होना चाहता? क्या तुझे मोक्ष की अभिलाषा नहीं? अच्छा तो मुझे बता कि क्या तू फ़क़ीरों और साधुओं की तरह इस जंगल में कुटी बना कर नहीं रहता?"

बूढ़ा—"मालूम तो ऐसा ही होता है।"

रामानन्द—"क्या तू नग्न नहीं रहता? क्या तेरे पास सांसारिक बंधन की सामग्रियां मौजूद नहीं?"

बूढ़ा—"मालूम तो ऐसा ही होता है।"

रामानन्द—"क्या तू घास-पात खाकर बसर नहीं करता? क्या तू ब्रह्मचर्य का जीवन व्यतीत नहीं करता?"

बूढ़ा—"मालूम तो ऐसा हो होता है।"

रामानन्द—"क्या तू ने त्याग नहीं धारण किया है?"

बूढ़ा—"मैं ने दुनिया को उन तमाम बेकार चीज़ों को छोड़ दिया है, जिन पर लोग मामूली तौर से जान देते हैं।"

रामानन्द—"हमारी तरह से तू भी फ़क़ीर, ब्रह्मचारी और सन्यासो बना हुआ है, पर हमने तो यह सब ईश्वर की भक्ति में लिप्त होकर छोड़ा और स्वर्ग की अभिलाषा को। तू ने ऐसा

क्यों किया ? यह समझ में नहीं आता । यदि तू ईश्वर में विश्वास नहीं रखता, तो फिर तू तप क्यों करता है ? यदि तुझको स्वर्ग की अभिलाषा नहीं, तो फिर संसार की अनेक वस्तुओं को तूने क्यों छोड़ रक्खा है ?"

बूढ़ा—"मैं ने तो कोई भी ऐसी चीज़ जिसे भला या अच्छा कह सकते हैं, नहीं छोड़ी । मुझे तो विश्वास है कि मैं ऐसा जीवन व्यतीत कर रहा हूं, जिससे मुझको धैर्य और शान्ति है । नहीं तो अच्छी ज़िन्दगी और बुरी ज़िन्दगी दोनों निरर्थक शब्द हैं । स्वयं तो कोई भी वस्तु सुखदायक या हानिकारक नहीं है । यह तो केवल हमारा वह विचार है कि जो चीज़ों को अच्छा और बुरा बना देता है ।"

रामानन्द—'तो तुझको किसी में विश्वास नहीं । म्लेच्छ भी जिस सत्य में विश्वास रखते और मानते हैं, तू उस सत्य से भी इन्कार करता है ।"

बूढ़ा—"अरे बाबा, फिलासफ़रों को बुरा भला कहना बेकार है । हम क्या हैं, हमें तो कुछ भी मालूम नहीं ।"

रामानन्द—"तो क्या तू नास्तिकों में से है ? क्या तू उन मूर्ख पागल लोगों में से है, जो सूर्य के प्रकाश, और रात्रि के अंधकार में भेद नहीं समझते ?"

बूढ़ा—"भाई, यह सच है कि मैं नास्तिक हूं । मैं उन्हीं में से हूं, जो मुझे तो भले मालूम होते हैं, परन्तु जो तुम्हारी दृष्टि में मूर्ख और पागल हैं । तुम मुझको दोष देते हो कि जो प्रत्यक्ष है उसको मैं नहीं मानता, परन्तु सच तो यह है जो कुछ प्रत्यक्ष है, मैं उसकी वास्तविकता को समझता हूं । यह सूरज प्रत्यक्ष चमकता हुआ दिखाई देता है, परन्तु मैं नहीं जानता कि उसकी असलियत और हक़ीकत क्या है । मैं जानता हूं कि आग जला

देती है, परन्तु यह नहीं कह सकता कि क्यों और कैसे ? तुम मेरी बातें ठीक ठीक न समझ सके। खैर, मुझे इसकी भी कुछ चिन्ता नहीं कि लोग मेरी बात समझें या न समझें।"

रामानन्द—"यदि यही बात है, तो तुम रूखा-सूखा खा कर इस जंगल में पड़े दुःख क्यों झेलते हो ? शरीर को अनेक कष्ट क्यों देते हो ? मैं भी अपने शरीर को कष्ट देता हूं और तुम्हारे ही तरह त्याग और वैराग्य का जीवन व्यतीत करता हूं, परन्तु वह इसलिये कि उससे ईश्वर प्रसन्न होता है, और मुझे आनन्द और मोक्ष प्राप्त होगा। यह समझने की बात है कि हर मनुष्य इसी-लिये दुःख झेलता और हानि उठाता है कि आगे चल कर उसे सुख और लाभ हो। यदि लाभ और सुख की अभिलाषा नहीं है, तो फिर जान-बूझ कर कष्ट उठाना, शरीर को दुःख देना मूर्खता है। यदि मुझे इस सत्य में विश्वास न होता, तो मैं त्याग और वैराग्य को वृथा समझ कर यहां से लौट जाता और संसार में जाकर लोगों से मिलता, धन सम्पति प्राप्त करने के लिये परि-श्रम करता और संसार के उन मनुष्यों की तरह, जो सुख चैन से रहते हैं, मैं भी सुख के साथ जीवन व्यतीत करता। परन्तु तू तो सुख, चैन और धन-दौलत इन सब को खो बैठा। तू हम सन्तों और साधुओं के पवित्र जीवन, ज्ञान-ध्यान और तपस्या की नकल क्यों करता है ? तेरे पास इस का क्या उत्तर है ?"

स्वामी रामानन्द ये बातें क्रोधान्ध हो कर कह गये, परन्तु बूढ़ा शान्त रहा। उसने धीरे से उत्तर दिया—"भाई, इन सब का कारण ढूँढना वृथा है।"

इन बातों से स्वामी रामानन्द का प्रयोजन और उद्देश्य तो ईश्वर की भक्ति और सेवा की बातचीत करना था। उनका क्रोध कम हुआ और उन्होंने शान्त होकर कहा—"भाई, यदि सत्य के

पक्ष में मैंने कोई अनुचित बात कही हो, तो मुझे क्षमा करो। ईश्वर मेरा साक्षी है कि मुझे तुझ से नहीं, तेरी मूर्खता से घृणा होती है। तुझे मूर्खता के अन्धकार में पड़ा देख कर मुझे इस लिये शोक होता है कि मैं ईश्वर का जीव समझ कर तुझ से प्रेम करता हूं और इच्छा करता हूं कि तेरी भी मुक्ति हो जाय। मुझे बता तो सही, कि तेरी इस दशा का क्या कारण है ?"

बूढ़े ने शान्ति और धीरज से इसका उत्तर देना आरम्भ किया—

"चुप रहना या उत्तर देना दोनों एक सा हैं। मैं अपने कारण बताए देता हूं। परन्तु मुझे तुम्हारी दलीलें मालूम करने की ज़रा भी परवाह नहीं, क्यों कि मुझे तुम में कोई दिलचस्पी नहीं है। न मुझे तुम्हारी भलाई की फ़िक्र है, न तुम्हारे दुखों और संकट का शोक। न मुझे इसकी चिन्ता है कि तुम मुझे अच्छा समझते हो या बुरा। मैं तुम से क्यों प्रीति या घृणा करूं। बुद्धिमान मनुष्य की दृष्टि में प्रीति और घृणा करना दोनों वृथा हैं।

"मेरा नाम परमानन्द है। मैं बम्बई का रहने वाला हूं। मेरे पिता बड़े अमीर एवं लखपती व्यवसायी थे। उनमें और कुछ भी गुण न थे। मेरे दो भाई और थे। दोनों तिजारत करते थे। मेरे पिता ने मेरे बड़े भाई का विवाह उसकी मरज़ी के ख़िलाफ़ एक गुजरातिन से कर दिया, परन्तु मेरे बड़े भाई को अपनी स्त्री से प्रेम न था। मेरा छोटा भाई उस पर आसक्त हो गया, पर यह स्त्री इन दोनों से घृणा करती थी और उसका गुप्त सम्बन्ध एक गवैये से था।

"मेरे भाइयों ने पता लगा मौक़ा पा कर उस गवैये को मार डाला। मेरी भावज को इस घटना से ऐसा धक्का पहुँचा कि वह पागल हो गई और मेरे दोनों भाई और भावज यह तीनों दीवाने

हो आवारा फिरने लगे। बाज़ार और कूँचों में लड़के इन पर पत्थर फेंका करते थे। कुछ अरसे के बाद यह तीनों एक दूसरे के बाद मर गये। मेरे पिता भी उदास और निराश होकर सब सम्पत्ति मेरे नाम छोड़ कर मर गये। मैंने इस सम्पत्ति को यात्रा और संसार-भ्रमण में ख़र्च किया। मैंने दुनिया की ख़ाक छान उसका अच्छा अनुभव प्राप्त किया। परन्तु सारे संसार में मुझे एक मनुष्य भी ऐसा न मिला, जिसे बुद्धिमान और ज्ञानी कहा जा सके या जो अपने जीवन से प्रसन्न हो। मैंने इस खोज में यूनान और रूम के महात्माओं की पुस्तकें पढ़ीं, बृटानियां और फ्रांस के राजनीतिज्ञों से वार्तालाप किया, जर्मन फ़िलासफ़रों से शास्त्रार्थ किये, मिश्र व ईरान के धार्मिक पुरुषों से बात-चीत की और काशी और पूना के पंडितों और शास्त्रियों से शास्त्रार्थ किये, परन्तु सिवाय इसके कि उन्हों ने अपने गुल व शोर से मेरे कान उड़ा दिये, मुझे कुछ भी हाथ न लगा। अन्त में उसी धुन में भटकता हुआ हिमालय की चोटियों पर चढ़ मान सरोवर और कैलाश पहुंचा।

"मैंने देखा कि मानसरोवर के किनारे एक बूढ़ा आदमी बिलकुल नग्नावस्था में समाधि लगाये बैठा है। उसको इसी दशा में बैठे तीस वर्ष व्यतीत हो चुके थे। उसके सूखे शरीर पर बेलें चढ़ गई थीं। जटाओं में चिड़ियों ने घोंसले बना लिये थे। वह हिल-डुल नहीं सकता था, परन्तु जीवित था। उसे देख कर मैंने सोचा और समझा कि यह वास्तव में एक बुद्धिमान व ज्ञानी मनुष्य है। मैंने विचारा, तो समझ में आया कि मनुष्य दुखित और उदास इसलिये होता है कि जिस वस्तु को वह अच्छा समझता है, उसे खो बैठता है या यदि वह उसे मिल जाती है, तो उसको उसके खो जाने का भय लगा रहता है। उसको

ऐसी बातें सहन करनी पड़ती हैं जिनको वह बुरा समझता है। यदि बुराई का विचार हमारे दिमाग़ से निकल जाय तो फिर हम को तकलीफ़ न हो एवं यही कारण है कि मैंने संसार छोड़ा और यहां चुपचाप अपना जीवन व्यतीत करता हूं।"

स्वामी रामानन्द ध्यान पूर्वक उस बूढ़े की कहानी सुनते रहे। जब वह अपनी राम-कहानी समाप्त कर चुका तो बोले–"हे परमानन्द, तू ने जो कुछ कहा, इस में कुछ तत्व है। यह तो सच है कि आदमी को संसार की धन सम्पत्ति और माया को तुच्छ समझना चाहिये। परन्तु मोक्ष प्राप्त करने की तरफ़ से उदासीन रहना अत्यन्त मूर्खता है क्योंकि ऐसे मनुष्य पर ईश्वर का कोप होता है। परमानन्द, मुझे तेरी मूर्खता पर शोक है इसलिये मैं तुझे उपदेश करूँगा ताकि तू ईश्वर को पहचानने और मानने लगे और भक्ति और सेवा का भाव तुझ में उत्पन्न हो।"

परमान्द ने कहा—"तू मुझे अपनी शिक्षा और उपदेश से क्षमा कर। यह न समझ कि मैं तेरे समझाने से तेरी तरह सोचने लगूँगा। मैं शास्त्रार्थ को व्यर्थ समझता हूं। मैं इसलिये शान्ति और एकान्तमय जीवन व्यतीत करता हूं कि मुझे किसी भी वस्तु की इच्छा नहीं है। भाई, तू अपनी राह ले, और मैं जिस दशा में पड़ा हूं, उसी में मुझे पड़ा रहने दे।"

स्वामी रामानन्द ज्ञान की बातों में दक्ष थे। ज्ञान के प्रकाश ने मनुष्य के हृदय और मस्तिष्क की दशा उनके सामने दर्पण के समान कर रक्खी थी। ये समझ गये कि अभी इस बूढ़े पर ईश्वर की कृपा नहीं हुई है और इसके मोक्ष का समय अभी नहीं आया है। वे ख़ामोश हो रहे, क्योंकि इस समय उनकी शिक्षा और उपदेश का प्रभाव मुक्ति के बदले उसको हैरानी का कारण होगा। यह सोच कर उन्हों ने उस पुरुष से विदा ले अपनी राह पकड़ी।

चलते चलते स्वामी रामानन्द यमुना किनारे पहुँचे। संध्या समय था, सूरज अस्त हो रहा था। आकाश पर लालिमा प्रेमी के लोहू के भांति बिखरी हुई फूल रही थी। बादलों के टुकड़े कहीं सुनहले, कहीं नीले, कहीं गुलाबी भिन्न २ प्रकार के रंगों की बहार दिखा रहे थे। यमुना शान्ति पूर्वक बह रही थी। किनारों पर पौधों और वृक्षों की शाखें झूम रही थीं। जंगल में मोर अपने सुन्दर पंखे खोले नाच रहे थे और कोयल वृक्षों पर बैठी हुई रह रह कर कूक रही थी।

नदी के किनारे कुछ दूर पर ही दो एक छोटी बस्तियां छिटकी हुई दिखाई देती थीं। किसानों, मल्लाहों और मछली वालों के घरों से धुवां उठ रहा था। दो चार नावें जो नदी में थोड़ी देर हुई दिख रही थीं, अपने बादबान उतार कर अब किनारे की ओर आ लगी थीं और नाविक अपने घरों की राह लेने लगे थे। हां, दो एक मछली वाले जाल डाले प्रतीक्षा में किनारे पर अब भी बैठे थे। वहीं पर नदी के किनारे की कुछ पृथ्वी काट कर अन्दर की ओर छोटा सा तालाब बना लिया था। इस पर काई जमी हुई थी और बेद की झाड़ियों ने तीन ओर से छाया कर रक्खी थी। कुछ मुर्गाबियां और कुछ बत्तकें उसके पानी से अटखेलियाँ कर रही थीं और एक सारस एक टांग पर खड़ा हुआ ईश्वर की पूजा में लीन था। चारों ओर सन्नाटा था। पपीहा कभी कभी 'पी कहां, पी कहां' की आवाज़ से इस शान्ति और सन्नाटे में खलल डालता था। झाड़ियों और वृक्षों पर पक्षियों का बसेरा लेते समय थोड़ी देर के लिये छटपटाना प्रकृति की शांति को एक क्षण के लिये भंग कर देता था।

इस सुन्दर दृश्य और सुहावने समय को देख कर स्वामी रामानन्द के बुझे हुए दिल का कमल भी खिल गया। इस समय

सुन्दरी की दिल लुभाने वाली और प्यारी प्यारी सूरत इनकी आँखों में फिर गई। यह सोचने लगे कि देखो ईश्वर ने अपनी प्रकृति और जीवों को कितना सुन्दर बनाया है। न केवल वृक्षों और पशुवों को रंग रूप देकर आश्चर्य्ययुक्त चित्र खींचा है, बल्कि मनुष्य जाति में भी सुन्दरी की सी मोहनी मूर्तियां उत्पन्न करके अपनी कारीगरी दिखाई है। परन्तु मनुष्य ऐसा बुरा है कि अच्छी से अच्छी सूरतों और मूर्तियों को अपनी बुराई से नाश कर देता है। स्वामी रामानन्द ज्यों ज्यों क़दम बढ़ाते जाते थे, उन्हें रह रह कर सुन्दरी का ध्यान सताता था। जब वह उसके जीवन व्यातीत करने के तरीक़े पर विचार करते, तो उनको उस पर तरस आता और फिर बड़े चाव और ज़ोम में कहते कि "ईश्वर की कृपा से मैं उसको इस घोर पाप और मूर्खता के गड्ढे से निकाल कर छोड़ूँगा। अपने सत्संग और उपदेश से उसका जीवन पवित्र करूंगा और ईश्वर की राह पर लगाऊंगा।"

इन्हीं विचारों में मग्न स्वामी जी राह चलते चलते तीन चार दिन बाद देहली पहुँचे। प्रातः काल का समय था। सूर्य अभी अभी उदय हुआ था। यमुना के घाटों पर ईश्वर के प्राणियों का जमघटा था। लोग नहाते और भजन गाते जाते थे। मन्दिरों में आर्तियां हो रही थीं और शंख और घड़ियाल बज रहे थे। स्वामी जी भी ईश्वर का ध्यान करके ईश्वर के धन्यवाद में लवलीन हुए—हे ईश्वर तू धन्य है। तूने मुझे यहां तक पहुँचा दिया; अब मैं अपने प्रण को पूरा कर सकूंगा। इसके अनन्तर उन्होंने शहर की ओर दृष्टि डाली, तो क़िले के प्रासादों की मीनारें और गुम्बदों के सुनहरे कलस चमकते नज़र आये। मसजिदों की मीनारों पर दृष्टि पड़ी। नगर के उपवनों के पास से गुज़रे। स्वामी जी दिल ही दिल में बहुत निराश हो कहने लगे—"देहली,

तू मेरी जन्मभूमि है। तेरी बड़ाई और प्रभुता में किसको सन्देह हो सकता है। तेरी ही गलियों और बाज़ारों में मैंने अपना बचपन बिताया, तेरे ही विलास-स्थानों में भोग किया। इन्हीं उपवनों और चमनों में प्रकृति के यौवन की छटा देखते थे। सागर व सुराही का दौर चलता था। दावतें होती थीं। प्यारी प्यारी सूरतों की संगति से हृदय प्रफुल्लित होता था। जवानी की उमंगें निकलती थीं। ऐ खाके देहली, जिसने यहां बचपन और यौवन बिताया हो, वह तुझे कैसे भूल सकता है। परन्तु मैं तो अपने पापों से तोबा कर चुका। मैं तो उस पापमय जीवन पर लात मारता हूं। साधू को प्रभुता, ऐश्वर्य से क्या प्रयोजन। मेरा दिल अब तुझसे फिर गया। तेरी प्रभुता व ऐश्वर्य्य संसारिक वस्तुओं की तरह मेरी दृष्टि में सर्वथा तुच्छ है। मुझे तेरी प्रतिभा, धन व सम्पत्ति, अहंकार और भोग विलास की सामग्री बजाय आनन्द के दुखमय प्रतीत होती है। प्रेम के बजाय तुझसे घृणा है। तूने अपने भोग विलास से भले मानसों और सफ़ेद पोशों को नाश कर दिया। तेरी सभ्यता ने विधर्म की पताका उड़ाई है और धर्म-ईमान को डुबाया है। मुझे अब तेरी सूरत भयानक और तेरी जलवायु विषमयी प्रतीत होती है। मैंने यदि तेरी ओर मुख मोड़ा, तो इसलिये कि भूले भटकों को राह पर लाऊं। वही जगदीश्वर मुझे तेरे जलवायु के प्रभाव से रक्षित रक्खेगा।"

इस प्रकार मन ही मन बातें करते स्वामी ने शाही समय के एक पुराने मज़बूत दरवाज़े से शहर में प्रवेश किया। द्वार पर कुछ फटे-हाल बुड्ढे और बुढ़ियां कचालू और सिंहाड़े लिये बैठे बेंच रहे थे। दो चार भिखारी भी चादर बिछाये भीख माँग रहे थे। साधू को देख कर एक पोपली बुढ़िया दुआयें देती आगे बढ़ी

और चरण छुए। फिर गिड़गड़ा कर बोली—"यह जन्म तो अकारथ गया और उम्र भर दुख सहन किये। अब ऐसा आशीर्वाद दो कि अगले जन्म में सुख पाऊं और तुम्हारे से भक्तों और स्वामियों की सेवा करूं।"

रामानन्द ने कहा—"माई, नारायण नाम सत्य है, बोल नरायण हरी; वह अपनी कृपा करेगा।" यह कह कर और उस के सिर पर हाथ रख कर स्वामी जी आगे बढ़े। दस ही बीस पग गये होंगे कि एक ओर गली में कुछ शरीर लड़के कबड्डी खेल रहे थे। साधू को देख कर चिल्लाने लगे कि भूत आया भूत; देखो इस की दाढ़ी तो बिलकुल बकरे की सी है। दूसरा बोला कि इसको पकड़ कर खेत में वृक्ष पर लटका दो, तो चील-कौवे फिर कभी खेत के पास न फटकेंगे। तीसरा बोला, ख़बरदार, ऐसा न करना; यह बड़ा मनहूस है। खेत पर पाला पड़ जायगा और नहीं तो आकाश से ओले बरसेंगे और सब खेती उजड़ जायगी। चौथे ने एक ढेला उठा कर स्वामी की ओर फेंका और पांचवे ने उनकी लुंगी पकड़ कर खींचनी चाही। कठिनता से स्वामी जी इस शैतानी पलटन से अपना पीछा छुड़ा कर 'नारायण हरी' करते और 'बच्चा खुश रहो' कहते आगे बढ़े और सोचने लगे कि देखो इस स्त्री ने तो मेरे चरणों की धूल ली और मुझे पवित्र समझा और उन लड़कों ने मुझे बुरा भला कहा और मुझ पर ढेले फेंके। वह मुझसे प्रेम करती थी और यह घृणा करते थे। संसार के जीवों को बुद्धि और ज्ञान कुछ नहीं। कुछ एक चीज़ को अच्छा समझते हैं और कुछ उसी चीज़ को बुरा समझते हैं। यह मानना पड़ेगा कि उस बुड्ढे परमानन्द ने जो कुछ कहा था वह सर्वथा झूठ न था। ईश्वर का चमत्कार उसके हृदय में न था, परन्तु वह उससे खूब परिचित था। वह उस नियत से

वंचित है। सच तो यह है कि यह संसार मिथ्या और माया है, केवल ईश्वर का नाम ही सत्य और अटल है।

योंही बातें करता साधू आगे बढ़ा और हाटों और मार्गों से होता सिविल लाइन्स की ओर चला। थोड़ी दूर चल कर एक बंगले में जिसके द्वार पर एम० मेहता बैरिस्टर-एट-ला का साइनबोर्ड लगा था, घुसा और बरसाती में खड़े हो कर 'नारायण हरी ! नारायण हरी !' की सदा लगाई। बंगले में से एक सेवक वरदी पहने निकला और बोला—"बाबा, आगे बढ़ो। यहां कुछ नहीं मिलने का।" साधू ने कहा—"भाई, हम भिक्षा नहीं माँगते, केवल अपने मालिक से कहदे कि एक साधू आप से मिलने आया है।" सेवक ने इनकी आकृति ध्यान पूर्वक देख कर कहा—"पागल हुआ है ! तेरे से भिखारी दिन में बीसियों आते हैं। साहब उनसे मिलना आरम्भ करें, तो कुछ काम ही न कर सकें। साहब देखेंगे तो क्रोधित होंगे। भिखारियों को बंगले में घुसने की आज्ञा नहीं है।" साधू ने फिर वही बात दुहराई और कहा—"भाई, इत्तिला कर दे, हम तेरे मालिक से मिलना चाहते हैं।" नौकर इस ढिठाई को देख क्रोध में आया और बोला—"जाता है कि नहीं या गरदन में हाथ डाल कर निकाल दूं।' जब साधू के कान पर जूं न रेंगी, तो नौकर ने दो-चार धक्के देकर साधू को निकाल बाहर करना चाहा। परन्तु साधू ने अत्यन्त शान्ति से इस सब को सहन किया और फिर नम्रता से वही प्रार्थना की। तब सेवक धीमा पड़ा और आश्चर्य में आया और फिर जा कर अन्दर साहब को खबर की।

बैरिस्टर साहब स्नानागार से निकल कपड़े पहनने के कमरे में गये थे और कपड़े पहनने के बाद हाजरी खाने के लिये जाने वाले थे। वे नौकर से सब हाल सुनने के बाद केवल ड्रेसिङ्ग गाऊन

पहन कर तुरन्त बाहर निकल आये। मिस्टर महेन्द्र मेहता अच्छे सुन्दर डील डौल के जवान थे। इनसानियत और शराफ़त इनकी शक्ल से टपकती थी। लहजे में कुछ मुसख़रापन था। पढ़े लिखे समझदार आदमी थे। बाहर आते ही जैसे उनकी दृष्टि स्वामी रामानन्द पर पड़ी, वे बहुत जोश और तपाक से रामानन्द की ओर हाथ बढ़ा कर बढ़े।

महेन्द्र—"अख़ाह, तुम हो रामानन्द ! न कहोगे, कैसा पहचाना है। यार, बुरा न मानना। सच तो यह है कि तुम आदमी नहीं जानवर मालूम होते हो। अच्छा यार, हाथ तो मिलाओ। कहो, वह दिन तुम्हें याद नहीं कि जब हम और तुम कालिज में एफ़०-ए० में पढ़ते थे। तुम्हारे मिज़ाज में उदासपन और वहशत तो तभी से थी, परन्तु मैं तो तब भी तुम्हारी सहृदयता पर मोहित था। तुम जान व माल दोनों ओर से लापर्वाह थे और हम लोग कहा करते थे कि तुम्हारी अक़्ल गुद्दी में है और तुम्हारे दिमाग़ की कोई चूल ढीली अवश्य है। परन्तु तुम यह सब सुनकर मुस्करा देते थे। आज तुमसे दस बरस बाद मिलकर बड़ी खुशी हुई। विशेष कर इस कारण कि तुम जंगल को छोड़कर बस्ती की ओर मुड़े। पशुओं से नाता तोड़ कर आदमियों में आये। आशा है कि तुम अब त्याग और वैराग्य का ढकोसला छोड़कर अपनी पुरानी ठीक राह पर आजावोगे।"

महेन्द्र फिर नौकर की ओर मुड़ कर बोले,—"भोला, देखो हमारे अज़ीज़ व दोस्त को स्नानागार में ले जावो, नहला कर फिर हमारे कपड़ों में से एक नया जोड़ा आपके पहनने के लिये निकालो और हाज़री के लिये दो एक और अच्छे खाने तैय्यार करो।"

सेवक आज्ञा बजाने के लिये तैयार हुआ, परन्तु रामानन्द ने



एक ही दृष्टि से इन सब बातों को स्वीकार करने से इनकार किया और बोले—

रामानन्द—"महेन्द्र, तुम भूल करते हो कि मैं धर्म और वैराग्य से झूठे संसार के मायाजाल में फँसने आया हूं। यह संसार सब झूठा है, केवल ईश्वर का नाम सच्चा है। जब कुछ न था वही था; जब कुछ न होगा वही होगा। ईश्वर ही अटल है और सब मिथ्या है।"

महेन्द्र—"अरे यार अज़ीज़ रामानन्द! क्या तुम समझते हो कि इन बड़े बड़े पर निरर्थक शब्दों के रोड़े ढुलका कर तुम मुझको आश्चर्य में डाल कर भयभीत कर दोगे? क्या तुम भूल गये कि मुझे भी थोड़ा बहुत फ़िलासफ़ी का ज्ञान है? क्या तुम्हारा विचार है कि तुम भागवत पुराण, गरुड़ पुराण और विष्णु पुराण की मनोहर कहानियों से मुझे भी उसी तरह क़ायल कर दोगे कि जिस प्रकार तुम लोग मूर्ख अनपढ़ लोगों को फुसला व बहका दिया करते हो। भाई मेरे, यह पुराणों और भागवत की कहानियां तो केवल पुराने ज़माने के बुद्धिमान मनुष्यों ने इस लिये गढ़ी थीं कि तुम लोगों का अर्थात् गुरुवों, पुजारियों, महन्तों और वैरागियों का अधिकार साधारण अनपढ़ मनुष्यों पर कभी घटने न पाये। वरना हम लोगों के लिये तो इनका वही मतलब है, जो अलिफ़लैला का अर्थात् दिल बहलाना।"

यह कह कर उसका हाथ अपने हाथ में लेकर महेन्द्र रामानन्द को अपने पुस्तकालय में ले गये।

महेन्द्र—"देखो, यह मेरा पुस्तकालय है। इसमें संसार भर के फ़िलासफ़रों की पुस्तकें उपस्थित हैं। पबलिक लाइबरेरी में भी फ़िलासफ़ी पर इतना उम्दा और किताबों का अच्छा ज़खीरा तुमको नहीं मिलेगा। शोक केवल इस बात का है कि यह सब

फिलासफी रोग-ग्रस्त पुरुषों के दिमाग़ी दुखों से अधिक मान नहीं रखती।"

यह कह कर महेन्द्र ने रामानन्द को एक आराम कुर्सी पर ज़बरदस्ती बिठला दिया। रामानन्द ने इस पुस्तकालय की सब पुस्तकों पर एक तीखी दृष्टि डाली और रूखी वाणी में कहा—"यह सब फूंक देने के योग्य है।"

महेन्द्र—"नहीं यार, ऐसा न कहो। इनके जल जाने का तो मुझे शोक होगा क्योंकि मजज़ूब की बड़ में भी एक स्वाद होता है और मीराकियों और सौदाइयों के स्वप्न व विचार की कहानियां न केवल मनोहर परन्तु शिक्षा प्रद होती हैं। यदि यह सब ज़ाया कर दी जावें, तो संसार का रूप रंग भी फीका पड़ जाय और हम सब मूर्खों की तरह अचम्भे में आकर आंखें खोले रह जावें।"

रामानन्द (जोश के साथ)—"यह तो सत्य है कि इन नास्तिकों की सब बातें मिथ्या और बिलकुल झूठ हैं। केवल ईश्वर ही सत्य और अटल है और वह मनुष्य का रूप धारण करके हमारे सामने प्रगट होता है और अनेक अवतार लेकर हमको दर्शन देता है। मनुष्यों की तरह हमारे सम्मुख आता-जाता, चलता-फिरता, बोलता-चालता है और हम ही लोगों में रह कर हमको सत्य की राह बतलाता है।"

महेन्द्र—"यह तुम बिलकुल सच कहते हो, परन्तु ज़रा ध्यान तो करो, जब ईश्वर का रूप मनुष्य का सा है, तब वह हमारे ही तरह बोलता-चालता, चलता-फिरता, कहता सुनता है तो फिर ईश्वर, और मनुष्य में अन्तर ही क्या रहा? हम स्वयं अपने ही में विश्वास क्यों न रखें। एक फ़रज़ी ईश्वर के सामने

ईमान क्यों लायें। खैर, इस बकवाद को दूर करो। मेरे तो समझ में नहीं आता कि तुम क्यों इस प्रकार का शास्त्रार्थ करने इतने दूर से आये हो। अब यह बताओ कि मैं तुम्हारी कुछ सेवा या सहायता कर सकता हूं ?"

रामानन्द—"निस्सन्देह, तुम मेरे साथ बड़ा सुलूक कर सकते हो यदि तुम एक अच्छी रेशमी अचकन, एक सलीम शाही जूता और सौ रुपये का नोट भी, उसके साथ दो। हां, एक सुगन्धमय तेल की शीशी भी ताकि मैं अपने बालों और दाढ़ी में तेल लगा सकूँ। बस, इसी के मांगने के लिये मैं तुम्हारे पास आया हूं। ईश्वर के नाम और पुरानी मित्रता की खातिर मेरी इतनी सहायता करो।"

महेन्द्र ने अपने नौकर को आज्ञा दी कि सामान और रुपया लाकर तुम शीघ्र स्वामी जी को दो और उन का हाथ मुंह धुला कर उनको कपड़े पहना दो। नौकर ने आज्ञा का पालन किया। रामानन्द का हाथ मुंह धुलवाया, तेल मल कर उनके बाल और दाढ़ी में कंघा और बुरुश किया। चाहा कि उनके फटे पुराने गेरुए कपड़े उतार कर उनको नए वस्त्र पहनाएं परन्तु स्वामी जी ने आँखों से संकेत करके उसको ऐसा करने से रोक दिया और आज्ञा दी कि उनके गेरुवे वस्त्रों को कदापि न छुए। बल्कि उसी पर अचकन पहना दे। उसने उनकी आज्ञा का पालन किया। जब स्वामी जी इस प्रकार संवर चुके, तो उन्हों ने दर्पण पर एक दृष्टि डाली, ताकि यह मालूम करें कि उनकी आवृत्ति और कैंडा अब कैसा मालूम होता है। स्वामी जी ध्यान पूर्वक दर्पण की ओर देख रहे थे और महेन्द्र उनकी इस दशा पर कुछ मुस्करा रहे थे कि स्वामी जी की दृष्टि महेन्द्र पर पड़ी।

रामानन्द—"महेन्द्र, मेरी इस धज का ठट्ठा न उड़ाओ

क्योंकि मैंने तुम से यह रुपया और वस्त्र केवल इसलिये लिये हैं कि उनको धर्म के काम में लाऊँ।"

महेन्द्र—"अज़ीज दोस्त! मैं तुम पर किसी बुरे कर्म का सन्देह नहीं करता, क्योंकि मेरा विश्वास है कि मनुष्य बुराई और भलाई दोनों से एक सा आदी है। अच्छाई और बुराई केवल मनुष्य के विचार और सम्मति पर निर्भर है, नहीं तो संसार में न कोई वस्तु अच्छी है, न बुरी। बुद्धिमानी इसी में है कि मनुष्य प्रथा और रीति के अनुसार चले। देखो, मैं अपने व्यवहार में नगर वालों की रीति व प्रथा का ध्यान रखता हूं और इसीलिये लोग मुझ को ईमानदार और नेक समझते हैं। जाओ यार, चैन करो।"

रामानन्द को महेन्द्र की इस बात से सन्तोष न हुआ और उसने उचित समझा कि महेन्द्र को अपने विचार और इरादे बतला दे।

रामानन्द—"तुम सुन्दरी को जानते हो, जो यहां नाटक-मंडली में है?"

महेन्द्र—"बला की सुन्दर स्त्री है। एक समय था कि मैं उस पर आसक्त और मोहित था। मैंने उस पर कई सहस्र रुपये व्यय किये। उसकी प्रीति और पागलपन में कितनी ग़ज़लें लिख डालीं। सौन्दर्य में भी अद्भुत शक्ति है, जो संसार के मुआमलात को तहबाला करने का बल रखता है। यदि सौन्दर्य में पतन न होता तो मनुष्य अहंकार से मस्त होकर ईश्वर की बराबरी करता। परन्तु यार रामानन्द, मुझे आश्चर्य होता है कि तुम हृषिकेश से देहली केवल सुन्दरी की बात करने आये।"

यह कह कर महेन्द्र चुप हुए और न मालूम क्या याद आया

कि ठंडी सांसें भरने लगे। रामानन्द यह देख कर लज्जा और क्रोध में डूब गये। उनको आश्चर्य था कि कोई मनुष्य अपने कुकर्मों का इस निर्लज्जता से वर्णन कर सकता है। वह चाहते थे कि धरती फट जाय और महेन्द्र उसमें समा जाय। धरती नहीं फटी और महेन्द्र कुछ उदासी के साथ अपने विचार में मग्न मुस्कराते रहे। साधू अपने स्थान से उठा और बहुत गम्भीरता से कहने लगा।

रामानन्द—"महेन्द्र, याद रक्खो, ईश्वर की कृपा हुई तो मैं इस स्त्री को संसार के झूठे जाल और पापमय जीवन से छुड़ा कर ईश्वर की राह पर लगाऊँगा। यदि ईश्वर की इच्छा हुई तो सुन्दरी बहुत शीघ्र इस नगरी को छोड़ कर साधुओं की संगति में धूनी रमायेगी।"

महेन्द्र—"देखो रामानन्द, कामदेव का अपमान न करना। वह बड़ा बलवान देवता है। यदि तुम उसको ऐसी भक्त और दासी को, जैसी कि सुन्दरी है, उसकी सेवा से छुड़ाओगे तो वह तुम पर क्रोध करेगा।"

रामानन्द—"मेरा तो मालिक और रक्षक ईश्वर है। वह सहायता करेगा। मैं तो यह भी प्रार्थना करूंगा कि वह तुम को भी ऐसी बुद्धि दे कि तू जिस घोर पाप की दशा में पड़ा है, उस से निकल कर अपना जीवन सँभाले।"

यह कह कर रामानन्द उठ खड़े हुए और कमरे से बाहर निकल कर चलने लगे, परन्तु महेन्द्र उसके पीछे २ गये और दरवाज़े पर जाकर उन्हें पकड़ा। महेन्द्र ने रामानन्द के कांधे पर हाथ रख कर बहुत धीरे से कान में कहा—"देखो रामानन्द, कामदेव का अपमान न करना, नहीं तो वह तुझसे बदला लेगा।"

रामानन्द ने महेन्द्र के यह वाक्य सुने परन्तु उन्होंने मुंह फेर

कर महेन्द्र को ओर देखा भी नहीं। वह अपनी राह पर चल पड़े। जब वह आगे बढ़े और महेन्द्र से जो बातें हुई थीं, उन पर विचार करने लगे, तो रामानन्द के हृदय में महेन्द्र की ओर से घृणा उत्पन्न हुई और सब से असहनीय यह बात लगी कि महेन्द्र सुन्दरी पर आसक्त और मोहित रह चुका है और उसको प्यार कर चुका है। सहवास तो पाप है, परन्तु स्वामी जी की दृष्टि में सुन्दरी के साथ सहवास घोर पाप था। वह सहवास को सदा से ही पाप समझते थे, परन्तु इससे पहले उन की तबियत उसका विचार करने से इतनी दुखी और उन की दशा ऐसी क्रोध की न होती थी।

वह दिल ही दिल में इस समय महेन्द्र को बुरी तरह कोसने और अधीर होने लगे कि किसी प्रकार शीघ्र सुन्दरी के समीप पहुँच कर वह उसे उज्ज्वल वस्त्र-धारी कुकर्मियों के चंगुल से छुड़ावे। परन्तु अँधेरा होने से पहले सुन्दरी के मकान पर जाना स्वामी जी ने उचित न समझा और अभी तो दोपहर भी नहीं हुई थी। स्वामी जी ने सोचा कि नगर ही के किसी मन्दिर में चल कर थोड़ी देर दम लें और पूजा पाठ में लिप्त हों। चांदनी चौक में से गुज़रने लगे, तो देखा कि अत्यन्त भीड़-भाड़ है। आर्य समा-जियों का नगर-कीर्त्तन हो रहा है। भजन मंडलियां गा रही हैं, व्याख्यान हो रहे हैं। स्वामी दयानन्द जी के जैकारे लग रहे हैं। कहीं आर्य्यों का शास्त्रार्थ मूर्त्ति-पूजा पर सनातन धर्मियों से हो रहा है, तो कहीं मुल्लाओं और पादरियों से मुसलमानी मत और ईसाई धर्म पर बहस छिड़ी हुई है। प्रयोजन यह कि चारों ओर कोलाहल है। स्वामी जी को आर्य्यों से बड़ी घृणा थी और स्वामी दयानन्द के तो नाम ही से चिढ़ते थे। उनका विश्वास था कि आर्य्यों ने कलियुग में धर्म का नाश कर

रक्खा है। एक जगह सुनने खड़े हुए, तो एक समाजी भाई मूर्त्ति खंडन पर व्याख्यान दे रहे थे। ज्यों ही उनके कानों में इन शब्दों की भनक पड़ी त्योंही वह नगरी की ओर से मुख मोड़ कर यमुना नदी की ओर चले और उसी समय दम लिया कि जब नदी किनारे पहुँच गये। स्वामी जी ने आज शुभ दिन और शुभ काम के विचार से निर्जल निराहार व्रत रक्खा था। वे इस दौड़-धूप के बाद कुछ थक से गये थे। नदी किनारे एक नाव लगी थी और रेते में मल्लाह की रस्सी का गट्ठा पड़ा था। स्वामी जी दम लेने के लिये उस गट्ठे पर बैठ गये। थके हुए तो थे ही, थोड़ी देर में निद्रा देवी की गोद में पहुँच गये। ज्यों हो उनकी आँख लगी त्योंही स्वामी जी स्वप्न देखते हैं कि धरती व आकाश का सर्वनाश हो रहा है। मूसलाधार वर्षा इस प्रकार हो रही है गोया किसी ने आकाश को चलनी कर दिया हो। हर ओर से बहिया चली आ रही है और संसार डूबता जाता है। स्वामी जी ने समझा कि प्रलय हो गया। वे आसन जमा कर ईश्वर का ध्यान और प्रार्थना करने लगे। इतने में एक ओर से बड़ा भयानक राक्षस, जिसके सिर पर दो सींग थे और जिसके दांत नुकीले और बड़े बड़े थे, ग़ुल मचाता उनकी ओर आता दिखाई दिया। वह उनको अपनी भुजा व मुख में ले कर इस प्रकार चला जैसे बिल्ली अपने बच्चों को लेकर चलती है। उनको तनिक भी कष्ट न हुआ।

बड़ी २ पहाड़ियों को फाँदता, बड़ी २ नदियों को पार करता, समुद्रों को लांघता और रेगिस्तानों को तै करता हुआ वह भयङ्कर देव आन की आन में सारे संसार का चक्कर लगा गया। अन्त में वह एक बहुत बड़े भयानक जंगल में पहुँचा, जहाँ आँधियाँ चलतीं और आग बरसती थी; लोहू और पीब की नदियाँ बहती थीं। धरती जगह जगह फट रही थी, और अन्दर से आग के लूके

निकल रहे थे। इस भयंकर देव ने एक टीले की चोटी पर ले जाकर स्वामी जी को बिठा दिया और कहा—"देख"।

स्वामी जी ने गरदन आगे बढ़ाई और झुके तो क्या देखते हैं कि एक खोह है, जिसमें भट्टी सुलग रही है। लूके ऊपर तक आते हैं। अग्नि की गरमी और प्रकाश आंखों को झुलसाये और चौंधियाए देते हैं। इस ग़ार में यमदूत मनुष्यों की जीवात्माओं को भिन्न २ प्रकार के कष्ट दे रहे हैं। यह रूहें उन्हीं मानवी शरीरों में अब भी नज़र आती थीं जैसी वे अपनी ज़िन्दगी में थीं। इनमें से कुछ तो फटे पुराने कपड़े भी पहिने थीं। परन्तु अजीब व ग़रीब बात यह थी कि इन कष्टों और दुखों के होते हुए भी, जो यमदूत उनको दे रहे थे, वह शान्त और सन्तुष्ट प्रतीत होती थीं।

सब से पहले स्वामी जी को एक हृष्ट-पुष्ट मनुष्य आसन जमाये संध्या करता दिखाई दिया। उसके मुख पर तेज था। यमदूत चारों ओर से उसको भाले और बरछियाँ मार रहे थे, परन्तु उसकी शान्ति और ध्यान में ज़रा भी बाधा न होती थी। जिस प्रकार सिनेमा के फिल्म एक एक क्षण में बदलते हैं, यह सीन भी देखते देखते बदल गया और स्वामी जी ने देखा कि वही पुरुष प्लेटफ़ार्म पर खड़ा वेदों की महिमा और प्रशंसा और मूर्त्ति खंडन के पक्ष में शास्त्रार्थ कर रहा है, यमदूत उस की ज़बान खेंच कर बाहर निकालते हैं और उस पर दहकते हुए अंगारे रखते हैं परन्तु उसकी बातचीत, उस की वाणी और उसके गम्भीर भाव में तनिक भी अन्तर नहीं पड़ता। रामानन्द ने पहचाना कि यह स्वामी दयानन्द हैं। जब दूसरी ओर दृष्टि डाली तो उन्हें और भी आश्चर्य हुआ। सर सइय्यद क़ुरान की तफ़सीर लिख रहे हैं। डारविन अपनी पुस्तक Descent of Man की कापी कर रहे हैं। हक्सले और स्पेन्सर अपनी अपनी फिलासफ़ी के प्रचार में लीन हैं। यम-

दूत उनके हाथों को गरम गरम सलाखों से दाग रहे हैं, परन्तु उनकी लेखनी की चाल में तनिक भी अन्तर नहीं पड़ता। इसी समूह में बूढ़ा परमानन्द भी बेहिस व हरकत समाधि लगाये बैठा दिखाई दिया। यमदूत दोनों ओर से नरसिंहे उन के कानों के पास इस ज़ोर से लगाते थे कि कानों के परदे फटे जाते थे और उस की आंखों के सामने जलती हुई मसालें हिला रहे थे जिससे उसका मुंह झुलसा जाता था, परन्तु उसकी शान्ति में कोई अन्तर नहीं था।

रामानन्द ने आश्चर्य से उस भयानक देव की ओर जो उसे लाया था, गरदन फेरी, तो देखा कि वह ग़ायब हो गया है। एक स्त्री मुख पर नक़ाब डाले बग़ल में खड़ी थी। वह बोली—"देख और समझने का प्रयत्न कर। यह दुरात्मा ऐसा हट्टी और जिद्दी है कि नरक में आकर भी इसकी आंखें न खुलीं। यहाँ भी इसकी आँखों पर वैसा ही ग़फ़लत का परदा पड़ा हुआ है, जैसा जीते जी पड़ा था। यह अब भी कुफ्र व इलहाद की धुन में मस्त और मतवाला हो रहा है। मर कर भी इस को होश न आया। इस से प्रमाणित होता है कि ईश्वर के पहचानने के लिये मरना पर्याप्त नहीं। जिन्होंने जीते जी वहदानियत के सार को न समझा वह मर कर भी जाहिल और मूर्ख ही रहा। यह नरक के दूत क्या हैं? ईश्वरी-न्याय के कार्य-कर्त्ता। इसी कारण यह रूहें न इन्हें देख सकती हैं, न इनकी बात सुन सकती हैं। यह तो सत्य से अलग और नास्तिक हैं, इसीलिये इन्हें उस दंड का जो उन्हें दिया जा रहा है हिस नहीं। इसी कारण ईश्वर भी इनको कष्ट भुगतने पर मजबूर नहीं कर सकता।"

यह सुनकर रामानन्द बोले,—"नहीं, नहीं, ईश्वर सब कुछ कर सकता है। वह जो चाहे कर सकता है।" नक़ाबपोश स्त्री ने

उत्तर दिया—" वह अनहोनी बात और मूर्खता कैसे कर सकता है। उनको दंड देने के लिये और उन में दंड का हिस पैदा करने के लिये आवश्यक है कि पहले सत्य का हिस उत्पन्न किया जाय और अगर उनमें यह हिस पैदा हो गया तो यह ज्ञानी फरिश्ते हो जाँयगे। दोनों बातें सम्भव नहीं हो सकतीं। यह सुन कर रामानन्द भयभीत होकर हक्का-बक्का रह गये और फिर नरक की ओर गरदन झुका कर देखने लगे।

इस बार उनको महेन्द्र दिखाई पड़ा। महेन्द्र की गरदन में बेले और चमेली के हार पड़े हुए थे। उसके पहलू में सुन्दरी एक अत्यन्त सुन्दर साड़ी पहिने उसके हाथ में हाथ डाले खड़ी हुई थी। दोनों मुस्करा मुस्करा कर प्रेम और स्नेह की बातें और फिलासफी पर वार्तालाप कर रहे थे। नरक के दूत उन पर आग बरसा रहे थे, परन्तु वह आग उनके लिए अमृत सा प्रभाव रखती थी और अंगारे जिन पर वह चल रहे थे, हरी हरी दूब से मालूम होते थे। यह देख कर रामानन्द मूर्छित होने लगे और धीरज व सन्तोष खो बैठे। घबराहट की दशा में चीख उठे—" हे ईश्वर, इसको दंड दे, दंड दे, ऐसा दंड दे कि यह रोदे, बिलबिलाने लगे और नाक रगड़ने लगे। यह महेन्द्र है। पापी महेन्द्र है। इसने सुन्दरी के साथ पाप किया है। इसको कदापि क्षमा न करना।"

सहसा स्वामी रामानन्द की आँख खुल गई। उन्होंने देखा एक हृष्ट-पुष्ट नाविक उनको पकड़े हुए बैठा है। जब यह होश में आये तो, वह बोला—" बाबा, धीरज धरो, धीरज धरो, तुम तो बहुत बर्राते हो और निद्रावस्था में अत्यन्त व्याकुल होते हो। यदि मैं इस समय तुमको जोर से न पकड़ लेता, तो तुम यमुना में लुढ़क गये होते और फिर तुम्हारा पता भी न चलता। सच कहता हूं, मैं ने तुम्हारी जान बचा ली।"

रामानन्द बोले--" ईश्वर का धन्यवाद है। नारायण हरी, नारायण हरी।"

यह कह कर स्वामी जी उठ खड़े हुए और उन्होंने अपनी राह ली।

स्वामी जी आगे बढ़ते जाते थे और सोचते जाते थे कि यह स्वप्न क्या बला थी। बड़ा भयानक स्वप्न था। यह ख़याल करना कि नरक की कुछ असलियत नहीं और यह केवल धोखा ही धोखा है, कुफ़्र व इलहाद से कम नहीं। अवश्य ही बुरी रूहों ने सोते में घेर लिया होगा; नहीं तो इस स्वप्न के कोई माने नहीं। स्वामी जी सच्चे और झूठे स्वप्न में भेद करना जानते थे। जंगल और बियाबानों में जहाँ पलीद रूहों के भयानक छलों से साधु-सन्तों को रात दिन साबक़ा रहता है, इस बात के पहचानने और भेद जानने का अभ्यास हो जाता है कि कौन सी बात ईश्वर की ओर से हुई और कौन सी बुरी रूहों के प्रभाव से। इसलिए कोई आश्चर्य्य की बात नहीं थी कि स्वामी जी तुरन्त ताड़ गये कि यह स्वप्न पलीद रूहों के घेरने का परिणाम था।

स्वामी जी रास्ता चलते जाते थे और गिड़गिड़ा कर विनय पूर्वक ईश्वर से कहते जाते थे,—"हे ईश्वर तू ने सोते में भी मुझे राक्षसों और दैत्यों के अधिकार में क्यों होने दिया। यह तो तेरी दया और कृपा से अनुचित है"। जिस ओर स्वामी जी इस उधेड़-बुन में चले जा रहे थे, उसी ओर मनुष्यों की भीड़ भी जा रही थी। यह जंगल के रहने वाले थे, इनको इतनी भीड़ का अभ्यास कहां। इधर से धक्का लगा उधर जा रहे, उधर से रेला आया, तो इधर आ कर गिरे। स्वामी जी परेशान थे कि यह सब लोग बावलों की तरह कहाँ जा रहे हैं।

अन्त में एक राहगीर से पूछा—"बाबा, यह सब लोग किधर और क्यों जा रहे हैं ?"

उसने कहा—"थियेटर का तमाशा शुरू होने वाला है और आज मिस 'सुन्दरी' स्टेज पर एक्टिंग करेगी। सब लोग थियेटर को जा रहे हैं।"

स्वामी जी ने सोचा—यह ठीक है। सुन्दरी को एक्टिंग करते हुए भी देखना चाहिये। इससे कदाचित अपने काम और ग़रज़ में सहायता मिले। बस, वे उस पुरुष के साथ हो लिये। उसका नाम रत्नकुमार था। थोड़ी ही दूर चलने पर सामने थियेटर नज़र आया। थियेटर में जगमगाती हुई बिजुली की रोशनी थी। भीड़ इतनी थी कि तिल रखने की भी जगह नहीं थी। शोर मच रहा था, हर मनुष्य अपनी कहता, दूसरे की न सुनता। स्वामी जी और रत्नकुमार भी एक जगह जाकर बैठे। कुछ मिनट बाद घंटी बजी, और परदा उठा। एक दम सन्नाटा हो गया। चमकीले वस्त्रों और जगमगाते हुए सामान से स्टेज की यह दशा थी कि आँख कठिनता से ठहरती थी। राजा इन्द्र का दरबार था, अप्सराएं राजा जी को अपने गाने से प्रसन्न कर रही थीं और सभा में रंगरेलियां हो रही थीं।

रत्नकुमार—"देखो, एक समय था कि इसी भारतवर्ष में कैसे कैसे तानसेन और बैजबावरे अपनी दक्षता से लोगों की रूहों को सुखी करते और समय समय की राग-रागिनी के ऐसे चित्र खींचते थे कि मनुष्य मुग्ध होकर आपे में नहीं रहते थे। सितार, सारंगी, बीन, बाँसुरी, जल-तरंग और तबले के बजाने वाले ऐसे चतुर थे कि वाह-वाह अश किया करते थे। अब राग रागनी की तो चर्चा ही नहीं। इस कम्बख़्त थियेटर की चलती हुई चीज़ों—ग़ज़ल और ठुमरी ने संगीत विद्या को तो बिलकुल

ही डुबो दिया। जिसको देखो बस इस बेतुके हारमोनियम का शैदा है। पश्चिमीय सभ्यता के अनुकरण में थियेटर का रिवाज हुआ, तो तौबा ही भली। सिवाय जगमगाती हुई पोशाकों और अवसर या बिना अवसर तान तोड़ने के एक्ट करने का तो नाम भी नहीं जानते। भला पहले औरतें लज्जा और संकोच को बालाए-ताक़ रख कर कभी इस निर्लज्जता से स्टेज पर आने पाती थीं? अब तो अन्धेर हो रहा है। सच तो यह है कि औरत ख़ाना-ख़राब है। यह मनुष्य की पक्की शत्रु और जनता के सर्वनाश का कारण है।"

रामानन्द—"तुम बुद्धि की बात कहते हो। इसमें सन्देह नहीं कि स्त्री से बढ़ कर मनुष्य का कोई शत्रु नहीं। वह मनुष्य को भोग विलास में फँसा कर उसकी मिट्टी ख़राब करती है। इसलिये उससे दूर ही रहना चाहिये।"

रत्नकुमार—"अजी कहाँ का भोग और कहाँ का विलास। स्त्री से तो आज तक सिवाय दुख और कष्ट के किसी को कोई सुख न हुआ। स्त्री हमारी विपत्तियों और पापों का कारण है। केवल यही प्रीति ख़ाना-ख़राब ही होती है। यह तो हृदय और जिगर का एक रोग है। कुछ ख़बर नहीं कि किस को और कब लग जावे।"

रामानन्द—"रत्न कुमार! तुम्हारे तबियत बहलाने के क्या तरीक़े हैं?"

रत्न कुमार—"मेरे दिल बहलाने का तो बस एक यही सामान है और वास्तव में वह भी अधिक मनोहर और आनन्ददायक नहीं। ध्यान में मग्न रहा करता हूँ और सच पूछो तो जब इनसान को ज़ोफ़-मेदे का रोग लग जाय, तो फिर और किसी आनन्द और सुख का अरमान भी नहीं रखना चाहिये।"

अवसर पाकर स्वामी रामानन्द ने रत्न कुमार को आत्मा और सत्य के आनन्द और बरकतों की तलक़ीन करनी आरम्भ की और ईश्वर से लौ लगाने की शिक्षा दी। बोले—"रत्न कुमार, मैं जो कुछ कहता हूं, उसको ध्यान पूर्वक सुनो और उस पर अमल करने का प्रयत्न करो, क्यों कि जब कुछ न था ईश्वर था; जब कुछ न रहेगा, केवल ईश्वर रहेगा। व्यर्थ बातों को छोड़ो और उससे लौ लगाओ।"

स्वामी रामानन्द चाहते थे कि अपना व्याख्यान व उपदेश जारी रक्खें, परन्तु चारों ओर से लोगों ने आँखें दिखाईं और गालियाँ उठानी आरम्भ की कि चुप रहो; बातें न करो। न आप सुनते और देखते हो; न दूसरों को सुनने और तमाशा देखने देते हो। बेचारे मजबूरन चुप हो गये।

राजा इन्द्र के दरबार में नाच व सरोद गर्म थी कि नारद मुनि दिखाई दिये। सब देवताओं ने सर झुका कर उनका सत्कार किया और राजा इन्द्र ने अपने पास सादर बिठाया। कुशल पूछ कर राजा इन्द्र ने पूछा—"महाराज, इस समय कैसे पधारे? संसार का क्या हाल-चाल है?"

नारद मुनि—"हे राजा इन्द्र! तुझे कुछ ख़बर भी है कि ऋषि विश्वमित्र आज दस वर्ष से ऐसी कठोर तपस्या कर रहे हैं कि किसी ऋषि ने आज तक उसका साहस न किया। उन्होंने प्रण किया है कि बारह वर्ष के तप के बाद वह ईश्वर से ऐसा बरदान मांगे कि उनकी शक्ति और प्रतिष्ठा का लोहा सब देवताओं को मानना पड़े और यदि तुम भी उसकी आज्ञा न मानोगे तो न केवल इन्द्र-लोक परन्तु सारे देव-लोक को वह जड़ से हिला देंगे। वह तो इस योग और तप में लीन हैं और तू यहाँ बेख़बर अज्ञान में बैठा नाच रंग में मस्त है।"

राजा इन्द्र (दुखी हो कर)—"तो महाराज, फिर क्या करना उचित है? कुछ उपाय बताईये। यह तो बड़ी विपत्ति आयी।"

नारद मुनि—"उपाय, मैं कुछ नहीं जानता। मैंने तुझ को खबरदार कर दिया।"

नाच-रंग की सभा समाप्त हुई। सब देवता और सभासद परामर्श करने लगे। किसी ने सुझाया कि, अप्सराओं में से किसी चंचल सुन्दरी को भेजना चाहिए, और उनकी तपस्या भंग करनी चाहिये। न बारह वर्ष योग के पूरे हो सकेंगे, न ईश्वर उनको बरदान देंगे, और न वह हम से बढ़ सकेंगे। इस उपाय को सब ने स्वीकार किया। मेनका अप्सरा जो इन्द्र लोक की अप्सराओं में सब से अधिक सुन्दर, चंचल और निःसंकोच थी, इस सेवा के लिये चुनी गई और उसने बड़ी प्रसन्नता से इस सेवा को स्वीकार किया।

दूसरा दृश्य हरे-भरे पर्वतों का था। जंगल के वृक्षों की छाया में कुटी बनाये ऋषि विश्वामित्र योग और तपस्या में लीन बैठे थे। एक बारगी एक ओर से मेनका मस्तानी जोगिन का रूप बनाये अपने लम्बे-लम्बे भौंराले काले केश शानों पर बिखराये हाथ में तम्बूरा लिये करुणामय वाणी में प्रेम-पूर्ण बिरह का मन को चंचल करने वाला एक गीत गाती दिखाई दी। ऋषि के ध्यान और तपस्या में जो इस से विघ्न पड़ा तो पहले तो क्रोध में आकर उस चंचला को एक दृष्टि से भस्म कर देने की इच्छा हुई। परन्तु ज्योंही इन की दृष्टि उस मोहिनो पर पड़ी, होश व हवास फ़ाख्ता हो गये। योग और तप सब फ़रामोश हो गया और मुदित होकर उस से बातें करने लगे। जोगिन ने ज्योंही स्टेज पर क़दम रक्खा, तमाशा देखने वालों की दृष्टि उस पर पड़ी। हर एक पुरुष 'सुन्दरी' को पहचा न गया

और तालियों के शोर से सारा थियेटर गूंज उठा। यह जगत-मोहिनी अपने सुन्दर शरीर और अठलाती हुई मस्तानी चाल से एक एक पग पर सैकड़ों हृदयों को कुचल रही थी और मन हरने वाली वाणी से तमाशा देखने वालों की आँखें नम हो रही थीं। रामानन्द ने सुन्दरी को दस साल बाद आज देखा था। वही मन को मोहने वाला सौन्दर्य, वही यौवन की चंचलता, वही हाव, वही भाव, जिसने उन्हें अव्वल दिन मोहित और मतवाला किया था, सुन्दरी में आज भी मौजूद था। उनकी दृष्टि देर तक उस पर न ठहर सकी। दिल व दिमाग़ का निर्णय उलटने लगा। रामानन्द ने दोनों हाथ सीने पर रख कर कलेजे को थाम लिया और एक ठंडी सांस ले कर बोले—"हे ईश्वर, अपनी लखूखा जनता में से तूने केवल एक को, औरों के दिल वा दिमाग़ पर इस बला का अधिकार और बस क्यों दे रक्खा है ?"

रत्न कुमार भी उनके समीप बैठा सुन्दरी पर दृष्टि डाल रहा था। बहुत लापरवाही से बोला—"लखूखा ज़र्रे ख़ाक से मिल कर एक तूदा बना। उस तूदे ख़ाक से इस औरत के शरीर का ख़मीर गूंधा गया। परन्तु बनावट की तरकीब कुछ इस प्रकार की गई कि यह परिणाम निकला, जो आँखों को भला मालुम होता है। जिस तरह यह ज़र्रए ख़ाक एकजा हुए, उसी तरह एक दिन फिर तितर बितर हो जायेंगे। रुक्मिणी, दमयन्ती, शकुन्तला और मेनका अब कहाँ हैं। उनकी ख़ाक और हड्डियों का भी कहीं पता नहीं। यह तो मैं मानता हूं कि स्त्रियां सुन्दर प्रतीत होती हैं परन्तु अन्त में क्लेश, दुख और संकट की सामग्री ही प्रमाणित होती है। स्त्री का आकर्षण प्रेम उत्पन्न करता है, परन्तु उनसे प्रीति करना न केवल निरर्थक परन्तु हँसी उड़ाने के

योग्य है। हर बुद्धिमान मनुष्य इसको जानता है। केवल अज्ञानी और मूर्ख इस पर ध्यान नहीं धरते।

ऋषि विश्वामित्र ने इस जोगिन के फेर में पड़ कर और स्वयं ख़राब हो कर अपने योग और तप को किस प्रकार खंडित किया और फिर जंगल में कैसा मंगल रचा जिसका परिणाम शकुन्तला के रूप में प्रगट हुआ, हमें इस सब कहानी से यहाँ प्रयोजन नहीं। अलबत्ता स्वामी रामानन्द के नेत्रों के सामने इन दृश्यों का एक के बाद दूसरे के गुजरने से जो दशा हुई उसे संक्षेप में बयान कर देना है। तमाशा समाप्त होते ही जब स्वामी जी थियेटर के बाहर निकले तो उनमें एक विशेष कैफ़ियत उत्पन्न हो गई थी। कभी ऋषि विश्वामित्र और मेनका की घटना पर ध्यान देते, कभी सुन्दरी की दशा और अपने विचार पर ग़ौर करते और दिल को यों समझाते कि ऋषि विश्वामित्र तो देवताओं के षडयंत्र का शिकार हुए। क्षण भर के लिये चूक गये कि उनकी तपस्या भंग हुई। वह क्या जानते थे कि यह जोगिन कौन है? किस की भेजी हुई है और किस लिये आई है? मैं तो सुन्दरी की दशा से भली भांति परिचित हूं। मुझे उसके विषय में कोई धोखा नहीं। मेरे हृदय में तो ईश्वर ने ही उसकी ओर सहानुभूति और दया उत्पन्न की है। मुझे तो ईश्वर ही ने उसकी मुक्ति का कारण बनाया है और खुद हिदायत की है कि 'जा और उसको पाप की राह से निकाल कर ईश्वर की राह पर लगा।' ऋषि विश्वामित्र की घटना का मेरे और सुन्दरी के मामले से क्या सम्बन्ध ! यह तो बात ही कुछ और है। मुझे व्यर्थ ही उलझन हो रही है। मुझे अपने विचारों पर दृढ़ रहना चाहिए और अब सुन्दरी के यहां चलना चाहिये। यह सोच कर स्वामी जी ने सुन्दरी के मकान की राह ली और

चावड़ी बाजार पहुँचकर उसके मकान के द्वार पर कुंडी खटखटाई। एक सेवक ने द्वार खोला और स्वामी जी को सुन्दरी के सामने ले जाकर खड़ा कर दिया।

---

(२) वेश्या

सुन्दरी देहली के एक कलवार के घर में पैदा हुई थी। शराब की दूकान से उसको ख़ासी आमदनी थी। उसके मकान के अन्दर के भाग में जुआख़ाना भी था, जहां नगर के छटे हुए गुण्डे बदमाश और जुआरी जमा होते थे। कलवार ने पुलीस से मिल कर यह कार्रवाई की थी, इसलिये उसे किसी प्रकार का भय नहीं था। जुए की नाल से भी इसको काफ़ी आमदनी थी। यद्यपि वह जाति का कलवार था, परन्तु शक्ल अच्छी और हाथ पैर बहुत अच्छे थे। वह अपने मतलब का बड़ा होशियार और हर-फ़न मौला था। जब उसने दूकान शुरू की थी, उस वक्त वह बहुत फटेहालों से रहा करता था; परन्तु दस ही वर्ष में धनवान हो गया। उसकी स्त्री दुबली-पतली बहुत बद-मिज़ाज, बदज़बान और बड़ी कंजूस थी। घर में किसी न किसी बहाने से दिन भर हंगामा बरपा रखती। पड़ोसी भी इससे भयभीत रहते थे, क्योंकि प्रसिद्ध हो गया था कि यह जादू-टोना करने में बड़ी होशियार है।

कलवार का एक लड़का भी था। मा-बाप लड़के को दुलार से पालते थे, परन्तु सुन्दरी की बड़ी बेक़दरी थी। घर में इसको कोई पूछने वाला नहीं था। पेट भर रोटी भी इसको कठिनता से मिलती थी। मां दिन भर मार-कुटाई करती थी और बाप कभी इसकी ओर आँख उठा कर भी नहीं देखता था। कलवार का एक नौकर सुक्खा कहार था। व अलबत्ता सुन्दरी को बहुत प्यार करता और उसकी देख-रेख रखता था। जब उसे घर के काम से छुट्टी मिलती, वह सुन्दरी को नहलाता-धुलाता और

कपड़े बदल देता था। जब मां मारती, तो अपनी कोठरी में ले जा कर उसको कभी खिलौना देता, कभी कपड़े की गुड़िया बना देता, कभी भजन सुनाता और कभी अपनी खटिया पर ओढ़ना उढ़ा कर सुला देता था। सुन्दरी भी इससे बहुत हिल गई थी और उसके प्यार को ग़नीमत जानती थी। कभी कभी ऐसा होता कि रात को जुआरी व शराबी घर में यहां तक द्वन्द मचाते कि मारपीट और खून-ख़राबे तक की नौबत आ पहुँचती थी और सुन्दरी नींद से जाग कर भयभीत हो सहम जाती, तो सुक्खा उसको अपने पास कोठरी में जा कर प्यार करके सुला देता था।

सुक्खा जाति का तो कहार था, परन्तु बड़ा सुशील, दयावान और ईश्वर-भक्त था। जो मनुष्य उसके साथ बुराई भी करता-उससे वह भलाई ही करने का विचार रखता और उसके साथ नेकी करता। वह हिंदी पढ़ा हुआ था।

रात को जब उसे छुट्टी मिलती, तो वह भागवत पुराण पढ़ता और प्रातःकाल उठ कर भगवत् भजन अवश्य करता था। जब कभी ऐसी नौबत आती कि सुन्दरो भयभीत होकर उसके पास आ जाती या वहीं सोती, तो वह उसको भागवत की अच्छी अच्छी कहानियाँ सुना कर बहलाता। कभी कृष्ण- लीला सुनाता और कभी राम-चरित्र से उसका दिल बहलाता था। यद्यपि सुन्दरी इन कथाओं के उपदेश को तनिक भी न समझ सकती थी, परन्तु उनसे उसकी तबियत अवश्य बहल जाती थी।

सुन्दरी की दस बारह वर्ष की अवस्था तक तो इसी प्रकार गुज़री। जब ज़रा सयानी हुई तो मुहल्ले के शरीर और आवारा लड़कों के साथ रहने लगी और बुरी बुरी आदतें सीखने लगी। घर में तो कभी भी इसका कोई पुरसाँ-हाल न था। अन्तर यह हो गया था कि सुक्खा भी अपने काम के समय के अलावा घर

में बहुधा ग़ैर हाज़िर रहा करता था। उसने अब साधु-सन्तों की शरण ली। वह बहुधा संत-साधुओं की कुटियों में जाया करता था। वह उनकी चिलमें भरता, पर दबाता, उनके यहाँ लगड़े लूले, अन्धे, कोढ़ी की जो फ़क़ीरी दुआ व दवा के लिये आते बड़ी सहानुभूति से सेवा करता। धीरे धीरे जब उसका यह शौक़ बढ़ता गया और तबियत संसार से हटती गयी, तो बहुधा उसकी नौकरी के काम में भी हर्ज होने लगा।

एक दिन कलवार की बीबी ने अपने पति से उसकी शिकायत की और उसने उसे मार कर निकाल दिया। सुन्दरी के अतिरिक्त उसके निकाले जाने का किसी को शोक न हुआ। सुन्दरी को रंज ज़रूर हुआ, परन्तु वह भी अब सुक्खा से इतनी मानूस न रही थी, बल्कि सड़क के लड़कों के साथ आवारा-गर्दी करती रहती थी। वह दिन भर की आवारा-गर्दी में चार छै आने वसूल कर लाती थी। अक्सर वह इन पैसों की मिठाई खाती और कोई शौक की चीज़ बाज़ार से मोल ले आती थी। यदि उसके जेब में कभी आने दो आने बचे रह जाते, तो माँ लड़-झगड़ और मार-पीट करके छीन लेती। सुन्दरी को गाने बजाने का शौक दामनगीर हो गया था। उसने दो चार ग़ज़लें और ठुम-रियां याद कर ली थीं और आप उनको गाया करती थी। जब वह बाज़ारू औरतों को तड़क-भड़क के कपड़े पहने और शान व शौकत से निकलते देखती, तो उसको भी इन बातों का हिर्स पैदा होता और जब उसके पूरा करने की शक्ति अपने में न पाती, तो वह दुखित हो जाती थी।

सुन्दरी की आवारा-गर्दी से उसको माता उस से और भी अधिक क्रोधित रहने लगी। एक दिन सुन्दरी को उसकी माँ ने मार-पीट कर घर से निकाल बाहर किया और वह सड़क पर

उदास कहीं बैठी थी कि एक स्त्री, जो उधर से गुजर रही थी, उसको देख कर खड़ी हो गयी। वह अचम्भित हो कर कुछ क्षण उसकी ओर देखती रही और थोड़ी देर बाद बोली।

औरत—"ऐ गुलाब के फूल ! ओ प्यारी लड़की ! बड़े भाग्यवान हैं वह माता-पिता जिनके घर में ऐसे चाँद से मुखड़े ने उजाला किया। तू किसकी लड़की है ?"

सुन्दरी धरती पर आँख गड़ाये चुप-चाप बैठी रही। उसके नेत्र लाल हो रहे थे और आँसू बह रहे थे। प्रतीत होता था कि वह अत्यन्त दुखी है। उस औरत ने फिर कहा—"बेटी, क्या तेरे माँ-बाप तुझको प्यार नहीं करते, और तुझे अच्छी तरह नहीं रखते ? तू उदास क्यों है ?"

सुन्दरी बोली—"मेरा बाप शराबी और जुआरी है और माँ कसायन है।"

इस औरत ने पहले तो इधर-उधर दृष्टि डाली कि कोई देखता तो नहीं है, फिर बड़े प्यार और दुलार से बोली—"बेटी, यदि तुझे स्वीकार हो, तो मेरे साथ मेरे घर चल। मैं तुझे अच्छे से अच्छे खाने खिलाऊंगी, चमकीले जोड़े तेरे लिये बनवाऊँगी। तुझको सिवाय नाचने-गाने और हँसने-कूदने के और कुछ नहीं करना पड़ेगा। मेरा एक लड़का है—खास मेरा लड़का। बड़ा सुन्दर है। उसके अभी डाढ़ी भी नहीं आई। वह तुझको जान से अधिक प्यार करेगा और अपनी आँखों का तारा समझेगा। तू मेरे साथ चल।"

सुन्दरी ने उत्तर दिया—"मैं खुशी से तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूं।"

सुन्दरी उस औरत के साथ हो ली। यह औरत पहले

सुन्दरी को एक सराय में ले गई, जहाँ वह खुद ठहरी हुई थी। वहाँ से शाम की रेल पर सवार हुई और सुन्दरी को लेकर आगरे पहुँची। यह औरत अधेड़ उमर की थी। उसका नाम मुन्नी था, और वह वेश्या-वृत्ति करती थी। यह सुन्दरी के रूप और लावण्य और उसकी प्यारी आवाज़ पर लट्टू हो गई और सोचा कि माल हाथ आया। उसने सुन्दरी को अपने घर ले जाकर रक्खा, खिलाया-पिलाया, अच्छे कपड़े बनवा दिये और नाच और गाने की शिक्षा देनी आरम्भ की।

इस औरत का लड़का अद्भुत शक्ल का था। न उसकी उम्र का पता चलता था, न यह मालूम होता था कि यह मर्द है या औरत, परन्तु संगीत विद्या का उस्ताद था। सुन्दरी की शिक्षा उसके सुपुर्द की गई। उसको स्त्री-जाति से अत्यन्त घृणा थी। वह सुन्दरी को नाना प्रकार के कष्ट देता और दिक़ किया करता था। नाचते समय जहाँ सुन्दरी के पैर चूके, उसने निर्दयता से कमची लगाई। गाने में ज़रा बेसुरी और बे-ताल हुई और उसने चुटकियाँ लेनी आरम्भ कीं। जब उसे अधिक क्रोध आता, तो थप्पड़ भी रसीद करता और मुँह चिढ़ाता था।

सुन्दरी बद-सुलूकी और कठोर व्यवहार की आदी थी। उसको यह व्यवहार कुछ नया या बुरा नहीं लगता था; किन्तु वह मुन्नी की अनुग्रहीत थी। थोड़े ही समय में नाचने, गाने, भाव बताने और वेश्यावृत्ति के सब हाव-भाव में सुन्दरी चतुर हो गई। अब उसका यौवन और लावण्य भी पूर्ण प्रतिभा पर था। मुन्नी के यहाँ नगर के बिगड़े हुए धनी, सेठ, साहूकार सब ही प्रकार के लोग आते जाते थे; सुन्दरी के यौवन और सौन्दर्य्य ने और नवीन पुरुषों को बन्दी बनाया। नगर में जहाँ कहीं नृत्य सभा होती, सुन्दरी अवश्य बुलाई जाती। सन्ध्या समय रोज़ाना

मुन्नी के कोठे पर नगर के नव युवकों, रईसों और सेठों का समूह रहता और खासा अच्छा दरबार लग जाता था।

सुन्दरी यौवन के सौन्दर्य्य के मूल्य से अनभिज्ञ और प्रेम के मार्ग से सर्वथा अनजान थी। वह केवल मुन्नी की आज्ञा का पालन करना अपना कर्त्तव्य समझती थी। वह उसके साथ में एक ऐसा खिलौना और तमाशा बनी हुई थी, कि जिससे मुन्नी नवयुवक धनिक पुत्रों की आँखों में धूल झोंक कर उनको खूब लूटती व अपना घर दौलत से भरती थी। कुछ समय तक यही हालत रही।

एक दिन शहर के एक नवाब के यहाँ किसी संस्कार के सम्बन्ध में नाच-गाने की महफिल थी। सुन्दरी भी उसमें बुलाई गई। सभा में नगर के सब धनवान, न्यायाधीश और बीसियों वजादार नवयुवक उपस्थित थे। उनमें से एक नवयुवक, जो बड़े धनवान हाकिम का पुत्र था, सुन्दरी को देखते ही उस पर मुग्ध हो गया। उस युवक का नाम जसवन्त था। वह उसके पास आया और प्रेम की बातें करने लगा। सुन्दरी ने जब देखा कि वह बला का सुन्दर युवा है, तो उसके मुख का रंग बदलने लगा। दिल की दशा ग़ैर होने लगी। आँखों में अँधेरा सा आने लगा, परन्तु जब उसने प्रेम और प्रीति की बातें आरम्भ की और चाहा कि गले लगाये, तो सुन्दरी ने खिलाफ़ मामूल उसके साथ रूखा और कठोर व्यवहार किया।

दूसरे दिन वह सुन्दरी के कोठे पर फिर पहुंचा। उसने अपनी विनय और दुःख से सुन्दरी को दिक़ और मजबूर करना चाहा। सुन्दरी इन्कार तो करती गई, परन्तु उसने महसूस किया कि इस युवक की प्रार्थना में कुछ ऐसा आकर्षण है जो उसके हृदय को अपनी ओर खींचे लिये जाता है। उसके लिये

यह दशा ऐसी नयी और अनोखी थी कि वह उसके समझने से सर्वथा असमर्थ थी।

अब जसवन्त सुबह-शाम उसके कोठे के चक्कर काटता, उसकी चाटुकारी करता, अपनी विनय प्रार्थना से उसको मजबूर करना चाहता, परन्तु यह उससे दूर ही भागती थी। वह लाख चाहती थी कि उसका सामना न करे, बल्कि उसका खयाल भी अपने दिल में न आने दे, परन्तु सुन्दरी को उसका ध्यान हर समय सताता रहता था। वह उदास और दुखित रहती, परन्तु इस दुःख और उदासपन का कारण उसकी समझ में न आता था। उसको आश्चर्य होता था, कि उसे क्या हो गया है। उन्हीं बातों में, जो उसे अत्यन्त रसीली और स्वादिष्ट प्रतीत होती थीं, अब उसका दिल ज़रा भी न लगता था। उनसे तबीयत और भी उदास हो जाती थी। उन रोज़ के आने जाने वालों से, जिन से वह आलिंगन करती थी, उसे अब घृणा हो गई थी। वह दिन भर पलँग पर पड़े पड़े आँसू बहाती और हिचकियाँ लेती। परन्तु तमाशा यह था कि जब जसवन्त आता और अपने प्यार व मुहब्बत की बातों से, अपनी विनय-प्रार्थना से उसकी कृपा का इच्छुक होता, तो यह उससे भी सहम सी जाती और 'नहीं, नहीं' के अतिरिक्त दूसरे वाक्य मुख से भी न निकालती।

यह दशा दो तीन सप्ताह रही, परन्तु जब सुन्दरी को इस बात का विश्वास हो गया कि जसवन्त वास्तव में उस पर मोहित है और वह स्वयं उस पर जान देती है, तो उसने बड़ी लज्जा व भाव से जसवन्त के कन्धे पर अपना सिर रख दिया। सर नवा कर वह उसके साथ होली और उसके घर जाकर रहने लगी। जसवन्त और सुन्दरी सुखमय जीवन व्यतीत करने लगे। यह दोनों रात दिन में एक क्षण के लिये भी जुदा न होते और इस

मिल-बैठने को नियामत समझते थे। संध्या समय वे नदी के किनारे या उपवन के किसी कोने में अकेले में जाकर बैठते। सुन्दरी अपनी प्रिय वाणी से कोई सामयिक गीत गाती और जसवन्त रह रह कर उसकी बलाएं लेता था। कुछ दिन बाद मुन्नी पता लगा कर जसवन्त के पास आई और कोलाहल मचाने लगी। वह सुन्दरी को अपने साथ ले जाने पर आमादा हुई और कहने लगी—

"सुन्दरी मेरी आँखों का तारा है। मैंने उसको बेटी की तरह पाला है। वह मेरे कुल का दीपक है। उसके बिना मेरे घर में अंधकार हो रहा है। मेरी बच्ची को बलपूर्वक ले आना मेरे साथ ज़ुल्म करना है। इसको वापस जाने दो।"

इसी प्रकार जब मुन्नी ने बहुत विनय की, तो जसवन्त ने उसे एक भारी रक़म देकर उससे अपना पीछा छुड़ाया। थोड़े दिन बाद मुन्नी फिर आयी और इस बार पहले से भी अधिक रक़म की इच्छुक हुई। जब जसवन्त ने इन्कार किया, तो उसने पहले से भी अधिक तूफ़ान बरपा करना शुरू किया। जसवन्त एक अधिकारी का पुत्र था। उसने उसको पकड़वा दिया।

जब पुलिस को यह मालूम हुआ कि वह पुरानी अपराधिनी है और न मालूम कितने अपराधों में सम्मिलित रह चुकी है, तो उसको अदालत से कठिन दंड दिलवाया और कारागार भेज दी गई और जसवन्त और सुन्दरी सुखमय जीवन व्यतीत करने लगे। उनके लिये हर रोज़ ईद और हर शब शब-बरात थी।

जब सुन्दरी जसवन्त से सच्चे दिल से कहती "मैंने तुम्हारे सिवा किसी और से प्रीति नहीं की, यदि की तो तुम से की" तो वह उत्तर देता—"मैं तुझ पर जान देता हूं।"

यह प्रीति का जादू छै महीने जारी रह कर अन्त में टूटा

और सुन्दरी को प्रतीत हुआ कि उसका जीवन अब बे-लुत्फ़ व बे-मज़ा है। जसवन्त उसकी दृष्टि में अब वह जसवन्त ही नहीं रहा। वह सोचती थी कि आख़िर यह हुआ क्या। जसवन्त ही बदल गया या उसी की तबीयत फिर गई? जब यह सूरत पैदा हुई, तो वह जसवन्त को छोड़ कर चल दी और सोचा कि कोई दूसरा जसवन्त ढूँढूगी। किसी ऐसे पुरुष के साथ रहना, जिससे कभी मुहब्बत न हो, उत्तम होगा, बनिस्बत उस पुरुष के साथ जीवन व्यतीत करना कि जिससे पहले मुहब्बत हो, लेकिन अब दिल में उसके लिये जगह बाक़ी न रही हो।

सुन्दरी एक के बाद दूसरे कई रईसों और बिगड़े हुए नवयुवकों के पास रही। वह ऐसे नवाबों के पास भी रही, जो अवस्था में बूढ़े परन्तु लालसा के लिहाज़ से जवान थे। भोग विलास की कोई सभा सुन्दरी के बिना आनन्दमय नहीं ख़याल की जा सकती थी। वह हर एक जलसे और सभा में अपने हाव-भाव, सौन्दर्य्य और यौवन के चमत्कार दिखलाती, और हर खेल तमाशे में जाती थी। थियेटर का शौक़ भी उसको बहुत था। वह रोज़ाना तमाशा देखने जाती और भिन्न भिन्न एक्टरों का एक्टिङ्ग ध्यान पूर्वक देखती; विशेष कर Heroine का part जो औरतें करती थीं, उनकी सुन्दरता को जय पर विशेष प्रकार से दृष्टि रखती और सोचती कि यदि मैं एक्ट करूं, तो इससे दर्जहा अच्छा एक्ट कर सकती हूं।

धीरे धीरे इस विचार ने उसके हृदय में ऐसा स्थान पाया कि एक दिन वह थियेटर कम्पनी के मैनेजर के पास पहुँची और कम्पनी में सम्मिलित होने और एक्ट करने की इच्छा प्रकट की। उसके यौवन, सौन्दर्य्य, उसकी प्रसिद्धि और विशेष कर जो शिक्षा उसने मुन्नी के यहां पाई थी, इन सब ने उसकी

सिफ़ारिश की और वह थियेटर की कम्पनी में दाखिल हो गयी। पहले पहल तो उसका रङ्ग अधिक न जमा, क्योंकि वह इस कला से अनभिज्ञ थी और उसे इसका अनुभव न था; परन्तु कुछ मास के परिश्रम के उपरान्त जब यह कम्पनी लखनऊ पहुँची, तो सुन्दरी की प्रसिद्धि का सितारा चमक उठा। उसने कुल नगरी को अपने ऊपर मुग्ध कर लिया।

सब से अच्छे दरजे की पंक्तियां रईसों के पुत्र, नवाबों और ताल्लुक़दारों ने कम्पनी के ठहरने के सब समय के लिये रिज़र्व कराली थीं। नगर के वकील, बैरिस्टर, डाक्टर, अधिकारी क़रीब क़रीब रोज़ सुन्दरी के सम्मान के लिये मौजूद रहते। मज़दूर दल और ग़रीब लोग अपने वस्त्र और घर के बर्तन गिरवी रख तमाशा देखने जाते। लखनऊ के अतिरिक्त अवध के हर ज़िले के निवासी शनिवार को बाहर से खेल देखने आते और एक एक सप्ताह पहले सीट रिज़र्व कराने का प्रबन्ध करते।

सुन्दरी के मकान के सामने तमाशाइयों और प्रेमियों का मेला लगा रहता था। फूलों, गजरों, हारों और फलों की डालियों के अम्बार लग जाते, रुपया और सोना मेह की तरह बरसाते। उसका नाम हर पुरुष की ज़बान पर था। कवि उसकी महिमा में छन्द लिखते, अख़बारों में उसके गाने और एक्ट करने की प्रशंसा प्रकाशित होती, धार्मिक नेता और नगर के अधिकारी सार्वजनिक सभा में उसको सोने के तमग़े और जवाहरात के हार प्रदान करते थे। यद्यपि वह इन बातों से दिल ही दिल में प्रसन्न होती और अपनी प्रसिद्धि पर गर्व करती थी, परन्तु वह अपनी प्रसन्नता को प्रकट न करती थी।

लखनऊ से चलकर सुन्दरी ने प्रयाग, बनारस, पटना और कलकत्ते में जनता से प्रशंसा का 'कर' प्राप्त किया। अन्त में देहली

आई, जहाँ वह पैदा हुई थी और जिसके गली कूचों में उसने दरिद्रता और निर्धनता में अपना लड़कपन व्यतीत किया था।

इस पुरानी राजसी नगरी ने सुन्दरी का राजसी स्वागत किया और उसका घर जवाहरात व आभूषणों से भर दिया। सुन्दरी पर लक्ष्मी जी की असीम कृपा हुई और उसके प्रेमियों की संख्या करना असम्भव हो गया। वह इन पर सर्वथा उदासीनता और बे-उपेक्षा की दृष्टि डालती और अपने धन, प्रसिद्धि, सौन्दर्य्य व यौवन पर गर्व करती थी परन्तु उसके हृदय में जसवन्त का स्थान अभी खाली था। वह ढूँढ़ते ढूँढ़ते थक गई थी, पर बरसों की खोज के उपरान्त भी अब तक कोई दूसरा जसवन्त न दिखाई दिया। उसका दिल टूट गया था और अब वह थक कर निराश हो गई थी।

सुन्दरी के प्रेमियों में महेन्द्र भी था और फ़िलासफ़री उदासीनता के होते हुए भी वह उस पर अत्यन्त आसक्त था। महेन्द्र यद्यपि धनवान और विलासी भी था, फिर भी आदमी समझदार और बुद्धिमान था, परन्तु उसकी लच्छेदार और दिल लुभाने वाली बात-चीत सुन्दरी को उस पर मुग्ध न कर सकी थी। वह उससे बिलकुल प्रीति नहीं करती थी। कभी कभी तो उसके हास्य व व्यंग से वह झुँझला जाती थी। उसकी कुफ़्र व इलहाद की बातें सुन कर वह तौबा करने लगती थी, क्योंकि उसके कर्म्म चाहे जैसे बुरे कहे जावें, परन्तु वह ईश्वर पर विश्वास करती और उससे डरती थी। न वह सिर्फ़ ईश्वर को मानती थी बल्कि देवी व देवताओं को भी पूजती थी। उसको भूत-प्रेत, जादू टोने से भी डर लगता था। वह शहीद मर्द की क़ब्र पर जा कर फूल व चादर चढ़ाती और मुहर्रम के ज़माने में ताज़ियों पर नियाज़ भी देती। जितना ही धर्म और विश्वास उसको प्रिय

था, उतना ही जीवन और मृत्यु का मुअम्मा उसकी समझ से बाहर था। वह इस रहस्य को जानना चाहती थी, परन्तु उसको समझ में कुछ न आता था। अपने कर्म्मों के कारण वह भविष्य से भयभीत रहती और मृत्यु का भय उसको उदास और दुखी किया करता था। किसी समय जब वह भोग विलास में लिप्त होती और उसको बुढ़ापे या मृत्यु का ध्यान आता, तो वह पीली पड़ जाती और काँपने लगती।

एक दिन ऐसा ही इत्तफ़ाक हुआ, तो महेन्द्र उसको समझाने लगा—"प्यारी सुन्दरी! मृत्यु और बुढ़ापे का डर क्या? वह तो शुदनी है। यदि आज जब कि हम हँस बोल रहे और यौवन की बहार लूट रहे हैं, मृत्यु आ जाये, तब भी वही परिणाम होगा और यदि बुढ़ापे से बाल सफ़ेद हो जायें, मुख पर झुर्रियां पड़ जायें, कमर टेढ़ी हो जाये, तब भी तो उस से वही परिणाम होगा। इसलिये इसका विचार और भ्रम करना व्यर्थ है। अब तो आराम से गुज़रती है, आख़बत की ख़बर ख़ुदा जाने। इस संगति के आनन्द को किरकिरा करने से क्या लाभ? जो कुछ हम देख सुन सकते हैं, वही ज्ञान है। प्रीति व स्नेह का सौदा सर में समाना और मनुष्य का उसमें मस्त और पागल होना ही विश्वास और धर्म है। जो कुछ समझ से बाहर है, वह हक़ीक़त व वास्तविकता से दूर है। इसलिये भ्रम में पड़ कर अपने तईं दुखित करना सर्वथा व्यर्थ और बेफ़ायदा है।"

सुन्दरी ने झुँझला कर उत्तर दिया—"मुझे तुम जैसे लोगों से, जिनका न कुछ विश्वास है न धर्म, जिनको न नरक का भय है न स्वर्ग की अभिलाषा, चिढ़ है और घृणा होती है। मैं तो इस जीवन के रहस्य से जानकारी करने की इच्छा रखती हूं

और विश्वास व धर्म को ढूँढती हूँ। मुझ को जीवन के इस कुकर्म में कुछ आनन्द नहीं आता।"

जब कभी सुन्दरी का दिल उदास और दुखित होता, तो वह बहुधा फिलासफी की पुस्तकें और धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करने लगती; परन्तु वह उनको अच्छी तरह समझ न सकती थी।

महीने में एक दो बार रात के समय मर्दाने वस्त्र पहन कर वह नगर में भ्रमण करने के लिये निकल जाया करती। वह कभी किसी फ़कीर या साधू के पास पहुँचती, तो कभी किसी मकबरे या दरगाह में जा निकलती।

एक रात को ऐसी इत्तफ़ाक़ हुआ कि वह गश्त लगा रही थी कि नदी किनारे एक छोटा सा मन्दिर दिखाई दिया, जिसमें आरती हो रही थी और भजन गाये जा रहे थे। इस मन्दिर की शकल मक़बरे की सी थी। इसमें न तो बुर्ज, न गुम्बद और न कलस थे। वह एक बहुत छोटी सी इमारत मालूम होती थी।

सुन्दरी ने देखा कि अन्दर एक समाधि बनी हुई है और चबूतरे के चारों ओर मज़दूर पेशा लोगों की भीड़ है, जिनमें से कुछ आरती उतारते और फूल चढ़ा रहे हैं। सुन्दरी वहाँ खड़ी हो गई और यह तमाशा देखने लगी; परन्तु उसकी समझ में कुछ भी न आया; क्योंकि न तो यह मन्दिर था न मसजिद, न गिरजा था न किसी का मक़बरा। थोड़ी देर तक वह चकित होकर खड़ी रही। जब आरती और भजन हो चुके, तो उपस्थित सज्जनों में से एक एक करके हर मनुष्य उठा और हर एक ने बड़ी श्रद्धा से समाधि पर माथा टेका। स्त्रियों ने अपने बच्चों को समाधि के शरण डाल कर हाथ जोड़े, दंडवत की और परिक्रमा करके सब लोग बाहर निकलने लगे।

सुन्दरी ने एक से पूछा—"यह क्या है?"

उसने चकित हो कर उत्तर दिया—"तुम नहीं जानती ? यह सुक्खा जी सन्त की समाधि है। यद्यपि यह जाति के नीच थे, परन्तु अपने कर्मों में बहुत ऊंचे और लँगड़े, लूले, अन्धे कोढ़ी, दरिद्री और नीच जाति के सहायक थे। हम लोगों को ऊँची जाति वाले और धनी पुरुष अपने मन्दिरों में दर्शन के लिये घुसने की क्या, दूर से खड़े हो कर भी देवी-देवता के दर्शन करने नहीं देते। यह हमारे गुरुदेव का स्थान है और यहाँ कहार, चमार, धोबी, नाई, कोरी, भंगी, ग़रीब, फ़क़ीर सातों जाति अपने गुरुदेव के दर्शन और उनकी पूजा के लिये आते हैं और कोई किसी को मना नहीं कर सकता। सुक्खा जी सन्त अपने समय के महापुरुषों में हुए हैं। हम लोगों के तो ये गुरुदेव हैं। चाहो तो तुम भी दर्शन करलो और माथा टेक लो।"

यह तो सुन्दरी ने घर छोड़ने के पेश्तर अपने लड़कपन में ही सुन लिया था कि सुक्खा फ़क़ीर हो गया। बरसों बाद जब सुन्दरी फिर देहली वापस आई, तो उसने यह भी सुना कि सुक्खा मर गया परन्तु उसको यह सूचना बिलकुल न थी कि मर कर सुक्खा ने संत की पदवी पाई। अनजान मनुष्य के यह वाक्य सुन कर उस को सुक्खा का ध्यान आया। उसकी प्रीति और स्नेह का ख़याल आते ही सुन्दरी की आंखों से अश्रुधारा बह चली। उस गुमनाम, बुरे भाग्य वाले दरिद्री और भले आदमी ने मर कर कैसी पदवी पाई कि आज उसकी समाधि पर फूल बरसाये जाते हैं, आरती भी की जाती है और उसके गुण गाये जाते हैं !

यह सब देख कर सुन्दरी की दृष्टि में उसकी प्रीति और स्नेह का आदर और बढ़ गया और उसके महत्व और प्रभुता की वह भी वैसी ही क़ायल हो गई, जैसे उसने अभी अभी

और बहुत से सीधे-सच्चे आदमियों को उसका गुण गाते देखा था ।

वह सोचने लगी—" यह तो सच है कि सुक्खा बड़ा नेक और भला आदमी था, परन्तु मर कर उस ने बड़ी पदवी और प्रभुता पाई । यह क्या बात है ? वह कौन सी वस्तु है जो धन और ऐश्वर्य भोग बिलास से भी अधिक उत्तम और मूल्यवान है, जिससे मनुष्य को देवताओं का पदवी प्राप्त होती है । " वह जहां बैठी थी वहां से धीरे से उठी, उसके नेत्रों से जल-धारा बह रही थी । वह समाधि को ओर बड़ी भक्ति और श्रद्धा से बढ़ी और झुक कर अपना माथा टेका

जब वह अपने मकान वापस आई, तो उसने महेन्द्र को एक आराम कुर्सी पर लेटे और हाथ में पुस्तक पढ़ते देखा । महेन्द्र मुस्कराता हुआ उठा, और सुन्दरी के गले में बाहें डाल कर बोला,—" जानेमन, तुमने तो प्रतीक्षा कराते-करात मुझे थका दिया, तब यह पुस्तक उठा कर पढ़ने लगा । तुम्हें मालूम है कि इसमें क्या लिखा है ? " बिना भय के अपनी बुद्धि व युक्तियों से अपने मस्तिष्क का सुधार जारी रक्खो " ; और मैं ने क्या पढ़ा कि सुन्दरी के प्यार व आलिंगन में मिश्री की सी मिठास और बिजली की सी हरारत प्रतीत होती है । देखो, एक दार्शनिक दूसरे दार्शनिक की पुस्तक का इस प्रकार अध्ययन करता है । जब तक मनुष्य केवल मनुष्य है, वह औरों के विचार के दर्पण में अपने ही विचार देखता है । हम सब लोग भी थोड़ा या अधिक पुस्तकों का अध्ययन इसी प्रकार करते और उनसे वही परिणाम निकालते हैं । "

सुन्दरी ने महेन्द्र की बात-चीत पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया । वह अभी तक सुक्खा जी सन्त ही के ध्यान में मग्न थी ।

उसने चकित हो कर उत्तर दिया—"तुम नहीं जानते ? यह सुक्खा जी सन्त की समाधि है। यद्यपि यह जाति के नीच थे, परन्तु अपने कर्मों में बहुत ऊंचे और लँगड़े, लूले, अन्धे कोढ़ी, दरिद्री और नीच जाति के सहायक थे। हम लोगों को ऊँची जाति वाले और धनी पुरुष अपने मन्दिरों में दर्शन के लिये घुसने की क्या, दूर से खड़े हो कर भी देवी-देवता के दर्शन करने नहीं देते। यह हमारे गुरुदेव का स्थान है और यहाँ कहार, चमार, धोबी, नाई, कोरी, भंगी, ग़रीब, फ़कीर सातों जाति अपने गुरुदेव के दर्शन और उनकी पूजा के लिये आते हैं और कोई किसी को मना नहीं कर सकता। सुक्खा जी सन्त अपने समय के महापुरुषों में हुए हैं। हम लोगों के तो ये गुरुदेव हैं। चाहो तो तुम भी दर्शन करलो और माथा टेक लो।"

यह तो सुन्दरी ने घर छोड़ने के पेश्तर अपने लड़कपन में ही सुन लिया था कि सुक्खा फ़कीर हो गया। बरसों बाद जब सुन्दरी फिर देहली वापस आई, तो उसने यह भी सुना कि सुक्खा मर गया परन्तु उसको यह सूचना बिलकुल न थी कि मर कर सुक्खा ने संत की पदवी पाई। अनजान मनुष्य के यह वाक्य सुन कर उस को सुक्खा का ध्यान आया। उसकी प्रीति और स्नेह का ख़याल आते ही सुन्दरी की आंखों से अश्रुधारा बह चली। उस गुमनाम, बुरे भाग्य वाले दरिद्री और भले आदमी ने मर कर कैसी पदवी पाई कि आज उसकी समाधि पर फूल बरसाये जाते हैं, आरती भी की जाती है और उसके गुण गाये जाते हैं!

यह सब देख कर सुन्दरी की दृष्टि में उसकी प्रीति और स्नेह का आदर और बढ़ गया और उसके महत्व और प्रभुता की वह भी वैसी ही क़ायल हो गई, जैसे उसने अभी अभी

और बहुत से सीधे-सच्चे आदमियों को उसका गुण गाते देखा था।

वह सोचने लगी—"यह तो सच है कि सुक्खा बड़ा नेक और भला आदमी था, परन्तु मर कर उस ने बड़ी पदवी और प्रभुता पाई। यह क्या बात है? वह कौन सी वस्तु है जो धन और ऐश्वर्य भोग विलास से भी अधिक उत्तम और मूल्यवान है, जिससे मनुष्य को देवताओं का पदवी प्राप्त होती है।" वह जहां बैठी थी वहां से धीरे से उठी, उसके नेत्रों से जल-धारा बह रही थी। वह समाधि की ओर बड़ी भक्ति और श्रद्धा से बढ़ी और झुक कर अपना माथा टेका

जब वह अपने मकान वापस आई, तो उसने महेन्द्र को एक आराम कुर्सी पर लेटे और हाथ में पुस्तक पढ़ते देखा। महेन्द्र मुस्कराता हुआ उठा, और सुन्दरी के गले में बाहें डाल कर बोला,—"जानेमन, तुमने तो प्रतीक्षा कराते-कराते मुझे थका दिया, तब यह पुस्तक उठा कर पढ़ने लगा। तुम्हें मालूम है कि इसमें क्या लिखा है? "बिना भय के अपनी बुद्धि व युक्तियों से अपने मस्तिष्क का सुधार जारी रक्खो"; और मैं ने क्या पढ़ा कि सुन्दरी के प्यार व आलिंगन में मिश्री की सी मिठास और बिजली की सी हरारत प्रतीत होती है। देखो, एक दार्शनिक दूसरे दार्शनिक की पुस्तक का इस प्रकार अध्ययन करता है। जब तक मनुष्य केवल मनुष्य है, वह औरों के विचार के दर्पण में अपने ही विचार देखता है। हम सब लोग भी थोड़ा या अधिक पुस्तकों का अध्ययन इसी प्रकार करते और उनसे वही परिणाम निकालते हैं।"

सुन्दरी ने महेन्द्र की बात-चीत पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। वह अभी तक सुक्खा जी सन्त ही के ध्यान में मग्न थी।

सुन्दरी ने एक ठंडी सांस ली, तो महेन्द्र ने कहा—"प्यारी, उदास होने की कोई बात नहीं। हमको इस संसार में किसी भी .खुशी का पूरा आनन्द उस समय तक प्राप्त होना असम्भव है, जब तक हम इस संसार ही को न भूल जावें। यह सच है कि समय भी अपना बदला चुकायेगा, परन्तु इस समय तो प्यार व प्रेम से दिल बहलाओ।"

यह सुनकर सुन्दरी ने रूखे भाव से कहा—"तुम और प्रेम का शब्द मुख पर लाओ !! तुमने आज तक किसी के साथ प्रेम किया है ? कम से कम मुझे तो तुमसे प्रीत नहीं, अत्यन्त घृणा है। मुझे धनवान पुरुषों से और उन लोगों से, जो आनन्दमय जीवन व्यतीत करते हैं, घृणा है। उनकी नेकी और भलाई केवल ग़रीब और दरिद्रियों में पाई जाती है। देखो, जब मैं बच्चा थी, सुक्खा नाम के सेवक ने मुझे पाला था। उसके हृदय में प्रेम का दर्द था और वह जीवन के तत्व से भीप रिचित था। तुम तो उसके चरणों की धूल की भी समता नहीं कर सकते। जाओ, मेरे सामने से दूर हो। अब मुझे अपनी शकल न दिखाना।"

यह कह कर और मुंह ढक कर सुन्दरी पलंग पर पड़ गई और सारी रात रोती और हिचकियाँ लेती रही। वह रात भर तरह तरह के प्रण करती रही कि अब पापों से तौबा करूंगी और सुक्खा जी सन्त की तरह दरिद्र और नेक जीवन व्यतीत करूंगी। परन्तु दूसरे दिन प्रातःकाल ही वह फिर भोग-विलास में लिप्त हो गई। उसे इस बात का खयाल उत्पन्न हो गया कि अब उसका यौवन ढल रहा है और यह सौन्दर्य्य अब कुछ ही दिन का मेहमान है।

दूसरे दिन उसके स्टेज पर प्रकट होने और ऐक्ट करने पर हर मनुष्य की जिह्वा पर उसकी प्रशंसा के शब्द थे। वह अपने इस प्रकार प्रसिद्ध और सर्व-प्रिय होने पर अहङ्कार करने लगी। बुढ़ापा

और मृत्यु उसे सामने हर घड़ी खड़ी मालूम होती थी और वह भय से उदास और दुखित होती जाती थी।

इसी शाम को, जिस दिन रामानन्द ने सुन्दरी को बहुत समय के उपरान्त देखा था, सुन्दरी अपने बड़े महल के पाईं-बाग़ में एक कुर्सी पर बैठी आराम कर रही थी। थोड़ी ही देर पहले दर्पण में अपनी शकल देखते समय उसे सिरमें एक सफ़ेद बाल दिखाई दिया था। वह इस विचार से भयभीत हो रही थी कि अब वह समय दूर नहीं कि उसके मुख पर झुर्रियाँ पड़ने और बाल सफ़ेद होने लगेंगे और उसका यौवन व सौन्दर्य तीसरे पहर की धूप की तरह ढलता दिखाई देगा। वह अपने दिल को धीरज देती थी कि तरह तरह के रंग व रोग़न की सहायता से और बनाव व सिंगार से बहुत दिनों तक वह अपने सौन्दर्य की प्रसिद्धि क़ायम रख सकेगी, परन्तु उसके कान में कोई कहता था कि "सुन्दरी, अब यौवन चला और बुढ़ापा आया।"

यह सुनकर वह भयभीत हो गई। उसके माथे पर पसीना आ गया। उसने आँख उठा कर फिर एक बार अपनी सूरत ध्यान से देखी तो कहने लगी—"अभी मेरा सौन्दर्य और यौवन दोनों उपस्थित हैं। कौन है, जो मुझ से प्रेम नहीं करेगा? यह कोमलता यह सुकुमारपन, यह हाव-भाव दिल्ली सी घनी बस्ती में तो किसी दूसरी स्त्री को नसीब नहीं। मैं अपने केशों के पाश में जिसको चाहूं बंदी बना सकती हूं।"

सुन्दरी इस उधेड़-बुन में थी कि एकाएक उसकी दृष्टि एक अनजान मनुष्य पर पड़ी, जो उसके सामने खड़ा था। उस मनुष्य के लाल नेत्र, दाढ़ी और सिर के बाल बिखरे हुए थे। उसकी सूरत से वहशत टपकती थी। सुन्दरी उसको देख कर डर गई।

दर्पण उसके हाथ से गिर पड़ा और उसके मुख से एक चीख़ निकल पड़ी।

रामानन्द सुन्दरी के सम्मुख गति हीन व विवेकहीन खड़ा सौन्दर्य-मुग्ध हो रहा था। जब रामानन्द की आँखें देर तक उसके सौन्दर्य की प्रतिभा को सहन न कर सकीं, तो उसने सच्चे दिल से प्रार्थना की कि, "हे ईश्वर, ऐसा कर कि मैं मोहनी मूरत पर मोहित होकर अपने कर्तव्य को भूल न जाऊँ।" दिल में यह दुआ माँग कर वह सुन्दरी से इस प्रकार बोला—

रामनान्द—"मैं यहाँ से बहुत दूर एक देश में रहता हूँ, परन्तु तेरे सौन्दये की प्रसिद्धि मुझे यहाँ तक खींच लायी है। मैं सुना करता था कि तू प्रसिद्ध नाचने वाली और अत्यन्त सुन्दरो स्त्री है और तेरे ऐश्वर्य और सम्पत्ति के चर्चे दूर तक फैले हुए हैं। इसलिए मेरे सिर में धुन समाई कि तुझ को और तेरे करिश्मों को अपनी आँखों से चल कर देखूं। तेरा सौन्दर्य और तेरी करिश्मासाजियाँ मेरे विचार से हजार गुणा बढ़ी-चढ़ी हैं। अभी अभी तुझे देख कर मैं दिल ही दिल में कह रहा था कि ऐसा कौन है, जो इस स्त्री से आँखें मिलाने से मतवाला न हो जाय। सुन्दरी, वास्तव में तू अपनी शान की एक ही है।"

सुन्दरी पहले तो इस भयानक मनुष्य को देख कर घबरा उठी और भयभीत हो गई, परन्तु यह बात-चीत सुनने के उपरान्त उस को कुछ संतोष हुआ और वह उस पर मनोहर दृष्टि डालने लगी। उसको इस मनुष्य की धज अद्भुत प्रतीत हुई और उसको यह शौक उत्पन्न हुआ कि इस असाधारण मनुष्य के हृदय और मस्तिष्क की क्या दशा है और इसके जीवन का क्या सार है? वह शोखी से हँस कर बोली,—"श्रीमान्, आपने तो आते ही तारीफ़ के पुल बाँध दिये। कहीं ऐसा न हो कि आप मुझ पर

मुग्ध हो, मेरे नयन बाणों से घायल होकर धूल और लोहू में लथ-पथ हो जाँय।"

रामानन्द—"सुन्दरी, मैं तो पहले ही से तुझ पर मुग्ध हूँ। विश्वास रख मैं तुझे अपने जीवन से भी अधिक प्रिय रखता हूँ। तेरे ही लिये मैं जंगल छोड़ यहाँ आया। जो बातें मुझे ज़बान से न कहनी थी, कहीं, और जो सुननी थीं, सुनी। मेरा हृदय तेरे लिये बेचैन और मस्तिष्क तेरे लिये परेशान था। मैं तेरे लिये दिन और रात एक करके भूखा और प्यासा रह कर—बियाबानों की धूल फाँकता—हिंसक जंतुओं से जान बचाता—यहाँ आया हूं। मैं तुझ से प्रेम करता हूं। अन्तर केवल इतना है कि औरों का प्रेम झूठा, थोड़ी देर का, अपवित्र और स्वार्थमय होता है, मेरी प्रीति सच्ची पवित्र और स्थायी है। मेरा तुझ से आत्मा का सम्बन्ध है। ईश्वर ने तेरी ओर से मेरे हृदय में दर्द व जोश उत्पन्न किया है। मैं मदिरा की मस्ती, सहवास के चाव का अरमान लेकर नहीं किन्तु एक ऐसी स्थायी प्रसन्नता का संदेसा लेकर आया हूं जिससे हृदय को प्रफुल्लता, आत्मा को प्रसन्नता और जीवन को आनन्द व सुख प्राप्त होता है, जिसका स्वाद, यदि मनुष्य एक बार चख ले, तो फिर जीवन भर उसके नहीं भूल सकता।"

सुन्दरी शरारत से मुस्कराई और बोली—"ऐ प्यारे मित्र! यह अद्भुत प्रेम तो देखने योग्य वस्तु होगी। देखूं तो वह वस्तु कैसी है। दिखाओ, विलम्ब न करो। मैं इस प्रेम के देखने के लिये अधीर और इस स्थायी आनन्द को प्राप्त करने के लिये बेचैन हूं। मुझे भय है कि यह अजीबो-ग़रीब आनन्द मुझे कभी प्राप्त न होगा और तुम्हारी बात हवाई बातों में उड़ जायगी। पवित्र प्रेम और स्थायी आनन्द का वचन सहज है, परन्तु उसको पूर्ण करना अत्यन्त कठिन है। हर एक मनुष्य में कुछ न कुछ शक्ति होती है।

तुम में कदाचित लम्बी-चौड़ी वक्तृता करने की शक्ति है। तुम ऐसे प्रेम और आनन्द के सब्ज़ बाग़ दिखाते हो, जिससे मनुष्य अभी तक प्रभावित न हुआ हो, परन्तु सौन्दर्य और प्रेम कहानी तो इतनी पढ़ी गई है कि उस में कठिनता से कोई ऐसा रहस्य होगा, जो सब पर प्रकट न हो।"

रामानन्द—"सुन्दरी, हँसी न करो। मैं तेरे लिये ऐसे प्रेम का संदेशा लाया हूं, जिससे तू अभी तक अपरिचित है।"

सुन्दरी--"मेरे मित्र ! तुमने आने में विलम्ब किया। मैं हर प्रकार के प्रेम का सुख लूट चुकी।"

रामानन्द—"जिस प्रेम का संदेशा मैं लाया हूं, वह मनुष्य के लिये अभिमान का कारण होता है। प्रेम के जिस मार्ग से तू परिचित है, वह लज्जा और अपमान की ठोकरें खिलवाता है।"

यह सुनते ही सुन्दरी की त्योरी चढ़ गई और वह कुछ क्रोधित हो कर बोली—"बड़े मियाँ, तुम बड़े दिलेर हो। जो मुंह पर आता है, उसे कह डालने से नहीं डरते। मेरी ओर देखो। क्या मैं लज्जित और अपमानित प्रतीत होती हूं ? न मुझे लज्जा आती है, न लज्जा आने का कोई कारण है। आनन्द और प्रसिद्ध हर समय मेरे सामने हाथ बांधे खड़ी रहती हैं। बड़े बड़े राजे-महाराजे मेरे चरण चूमते हैं। मेरा जीवन अत्यन्त तुच्छ प्रतीत होता है; परन्तु इस तुच्छ जीवन ने वह हश्र बरपा कर रक्खा है कि सहस्रों भरे-पूरे घर नष्ट हो गये। न जाने कितने दिलों की बस्तियां उजड़ गईं, और निराशा ने उनका नामोनिशां मिटा दिया। इस तुच्छ व्यक्ति ने अपराध और हत्याएं कुछ कम नहीं कराईं। फिर जिसकी यह सम्पत्ति, प्रभुता और प्रसिद्धि हो, उसको लज्जा क्यों आवे ?"

रामानन्द—"तू जिन बातों को अहङ्कार का कारण समझती है, ईश्वर की दृष्टि में वह पाप और लज्जाजनक है। ऐ बुद्धिहीना

स्त्री ! मेरे और तेरे जीवन में ज़मीन और आकाश का अंतर रहा है और इसी कारण हमारे लिये एक दूसरे के भाव और विचारों को समझना असम्भव सा प्रतीत होता है। मैं ईश्वर को साक्षी करके कहता हूं, मैं तुझे अपने से विचारों वाला व्यक्ति बनाने आया हूं, और उस समय तक तेरा पीछा न छोड़ूंगा, जब तक हम दोनों एक ही धुन के मतवाले न हो जांयगे। कदाचित ईश्वर मेरे वाक्यों में वह प्रभाव पैदा कर दे कि तेरा हृदय मेरे शब्दों से मोम की तरह पिघल जाय और मैं तेरे हृदय और मस्तिष्क को जिस प्रकार चाहूं, नये सिरे से बना सकूं। कदाचित् ईश्वर मेरी वाणी में वह शक्ति प्रदान कर दे कि तेरे नेत्र प्रेम और भक्ति के रस से डूब जांय और फिर मैं अपने योगिक बल से तुझ को ऐसा नया शरीर दूं, कि जिसकी सुन्दरता और आनन्द का कभी पतन न हो।"

सुन्दरी का क्रोध शान्त हो गया। वह सोचने लगी कि यह मनुष्य के जीवन के सार की बात चीत करता है और इसकी वाणी में जादू का असर है। हो न हो यह कोई साधू है और बुढ़ापे और मृत्यु से बचाने का कोई यंत्र इसके पास अवश्य है। किसी न किसी प्रकार इसको अपने प्रेम में फँसा कर अपने बस में करना चाहिये।

यह सोच कर वह कुरसी पर से ऐसी उठी जैसे वह इस मनुष्य से दूर रहना चाहती हो। उठते समय उसने अपने सिर व छाती से अंचल गिरा दिया; फिर एक भाव से ढका, बाल संभाले, सर को ढका और एक अन्दाज़ से पलंग पर तकियों का सहारा ले कर पाँव फैला कर बैठी। उसके नयनों में इस समय मतवालापन और भाव में शोख़ी शरारत थी, परन्तु साथ साथ वह लज्जा व संकोच का बहाना भी करती जाती थी। ग़रज कि इस समय वह सौन्

व प्रेम की ऐसी मनमोहनेवाली चित्र बनी हुई थी कि सौ वर्ष के बूढ़े भी उस पर आसक्त हुए बिना न रह सकते थे। रामानन्द ने एक दृष्टि उस पर डाली, पर अपने स्थान से न हिले। उनके पाँव काँपने लगे, दिल धड़कने लगा, जिह्वा शुष्क हो गई, और थोड़ी ही देर में उनकी आँखों में अँधेरा आया कि जैसे किसी ने आँखों के सामने परदा डाल दिया हो।

रामानन्द ने ख्याल किया कि ईश्वर उसकी सहायता के लिये आ पहुंचे और उन्होंने उसकी आँखों पर हाथ रख दिया कि वह उस स्त्री को देख न सके। इस विचार से रामानन्द को कुछ धीरज हुआ। उन्होंने अपने तईं सँभाला और बहुत गम्भीर वाणी में बोले,—"ऐ स्त्री, क्या तू समझती है कि मैं तेरे केश-पाश में फँस कर पापी बनूंगा और ईश्वर मुझे देखेगा ही नहीं।"

सुन्दरी ने सिर हिलाया और बोली,—"ईश्वर! ईश्वर से कौन कहता है कि वह अपनी दृष्टि हमारी ओर जमाये रक्खे! यदि उसे हमें देखना बुरा लगता है, तो वह अपनी राह ले। इसमें बुरा लगने की क्या बात है। हम वही करते धरते हैं, जो हमारी प्रकृति में है और प्रकृति उसकी बनाई हुई है। मैं तो यह समझती हूं कि लोग व्यर्थ ही ईश्वर की ओर से बातें बनाते हैं और उसके साथ ऐसे ऐसे विचार और बातें लगा देते हैं कि जो उसके दिमाग़ में कभी भी न आई होंगीं। अच्छा यह बतलाओ कि तुम स्वयं क्या चीज़ हो, जो ईश्वर का नाम ले कर मुझ से बातें बना रहे हो?"

इस सवाल पर स्वामी रामानन्द ने मांगे हुए कपड़े उतार फेंके और गेरुआ वस्त्र दिखा कर बोले,—"मैं स्वामी रामानन्द हूं और हृषिकेश से आ रहा हूं। मुझे ऐसे झूठे संसार से कोई प्रयोजन नहीं। मैं तो ईश्वर भजन में लिप्त व मग्न था। ईश्वर ने मेरे हृदय

में तेरी ओर से दया के भाव उत्पन्न किये और कहा—' रामानन्द, जा ; सुन्दरी घोर पाप में लिप्त होकर नष्ट हो रही है। उसको इस अन्धकार से निकाल, ईश्वर की राह पर लगा ? ' मैं चल खड़ा हुआ, और अब तेरे सामने हूँ। " स्वामी रामानन्द और हृषिकेश का नाम सुनकर सुन्दरी का रंग फीका पड़ गया। वह भय से काँपने लगी और विनय प्रार्थना करती हाथ जोड़ कर स्वामी के चरणों पर गिर पड़ी।

साधू को प्रणाम कर उसके चरणों में मस्तक रख सुन्दरी बोली—" तुम यहां क्यों आये हो ? मुझ से क्या चाहते हो ? मुझे दुःख मत देना। मैं जानती हूँ कि साधु-संत लोग स्त्रियों से अत्यन्त घृणा करते हैं। तुम भी मुझ से घृणा करते होगे और मुझे दुःख देने आये होगे ? मैं तुम्हारी शक्ति और स्वभाव से परिचित हूँ। मुझे इससे इन्कार नहीं। परन्तु स्वामी जी को न मुझ से घृणा करनी चाहिये और न मुझे दण्ड देना चाहिये। मैंने और लोगों की तरह साधु-संतों को बुरा नहीं समझा और न कभी स्वप्न में भी उनकी हँसी की। इस लिये तुम भी मेरी सम्पत्ति और ऐश्वर्य्य को पाप न कहो। यदि मैं गाने बजाने में चतुर या सुन्दर हूं, तो यह मेरा अपराध नहीं। मैं लोगों को लुभाने और रिझाने ही के लिये बनाई गयी हूं। तुम स्वयं थोड़ी देर हुई कह रहे थे कि तुम मुझ से प्रीति करते हो। मुझे श्राप मत देना। ऐसा न करना कि मेरा यौवन और सौन्दर्य्य दोनों धूल में मिल जावें। मुझे अधिक न डराओ। मैं पहले से ही भयभीत हूं। मेरी जान मत लेना-मैं मृत्यु से बहुत डरती हूं। "

रामानन्द ने सुन्दरी को उठने का संकेत किया और उसके गिड़गिड़ाने का यों उत्तर दिया—" माई, मुझ से न डर। मैं तुझ से कोई दुर्बचन न बोलूंगा। मैं आप पापी हूं। मुझे तुझे लज्जित

करने का क्या अधिकार है। मैं क्रोधित होकर तेरे पास नहीं आया हूं। किन्तु मुझे तुझ पर दया आई है, इसीलिये चला आया हूं। मैं निष्कपट भाव से कह सकता हूँ, कि तू मुझे बहुत प्रिय है। उस दया के भाव ने, जो इस समय मुझ में प्रवेश कर रहा है, मेरे तन में आग सी लगा रक्खी है। यदि तेरी आँखों से काम, क्रोध, लोभ, मोह का परदा उठ जाय, तो तू देख लेगी कि मेरी सच्ची प्रीति तेरे साथ क्या काम करती है। जिस तरह सुवर्ण अग्नि में डालने से उज्ज्वल हो जाता है, उसी तरह तू मेरी दया और प्रीति के अग्निकुंड में पड़कर पवित्र हो जायगी। तेरे सारे पाप और अपराध धुल जावेंगे। तेरा हृदय निर्मल व कोमल हो जायगा।"

सुन्दरी—"साधू, मैं तुम्हारी बात का विश्वास करती हूं और मुझे अब न तो तुम से डर लगता है और न किसी जाल कपट का तुम से भय है। मैंने हरिद्वार व हृषिकेश के साधु-सन्तों की कहानियाँ सुनी हैं। सन्त सांईदास और ऊधो भगत के चमत्कार व परिश्रम का हाल भी मुझ को मालूम होता रहा है। तुम्हारे नाम से भी मैं परिचित थी और मैंने यह भी सुना था कि यद्यपि अभी तुम्हारी अवस्था अधिक नहीं, परन्तु तुम गुरू की पदवी प्राप्त कर चुके हो। ज्योंही मैंने तुम्हें देखा मुझे विचार हुआ कि जो मनुष्य मेरे सामने खड़ा है, वह साधारण मनुष्य नहीं है। कृपया मुझे यह बताओ कि यदि तुम मुझ से प्रीति करते हो, तो क्या तुम मुझे मृत्यु से भी बचा सकते हो?"

रामा—"हे सुन्दरी, जो मनुष्य सच्चे दिल से मृत्यु पर विजय चाहता है, वह सदा जी सकता है। सुन्दरी! काम, क्रोध, लोभ, मोह के अंधकार से निकल, जिसमें तू फँसी हुई है। अपने शरीर को, जो ईश्वर ने तुझ को दिया है, उन दैत्यों और राक्षसों

से बचा, जो इसे नरक की अग्नि में जलाने को लिये जाते हैं। तेरे घोर पाप तुझे झुलसाये दे रहे हैं। उनसे पिंड छुड़ा और मिथ्या बातों को छोड़ साधू सन्तों की शरण ले। ईश्वर तुझे शान्ति देगा और तेरा बेड़ा पार लगायेगा। सच्ची प्रीति किसे कहते हैं, यह तुझे तब ही मालूम होगा।"

सुन्दरी—"ऐ साधू! यदि मैं यह कुल सम्पत्ति, संसार एवं भोग विलास छोड़ अपने अपराधों से तौबा कर लूँ, तो क्या मैं सचमुच स्वर्ग जाकर फिर जन्म लूंगी और क्या मेरी सुन्दरता और जवानी इसी प्रकार स्थिर रहेगी।"

रामा—"सुन्दरी, मैं तुझे अमर करने के लिये आया हूँ। जो कुछ वचन मैं मुँह से निकालता हूँ, उनमें विश्वास रख और मेरे कहे पर चल।"

सुन्दरी—"मैं कैसे विश्वास कर लूँ कि जो कुछ तुम कह रहे हो, सब सच है।"

रामा—"शास्त्र और पुराणों में पढ़ लेना और अपनी आँखों से वह सब बातें देख लेना, जिनका अब तक तू विश्वास नहीं करती।"

सुन्दरी—"महाराज, मैं तुम्हारी बात मानना चाहती हूं क्योंकि सच तो यह है कि इस संसार में मुझे सच्चा आनन्द प्राप्त नहीं हुआ। यद्यपि मेरी पदवी बहुत सी रानियों महारानियों से भी अधिक ऊंची है, तब भी मैं बहुधा कुढ़ो और उदास रहती हूं। कभी कभी तो जीवन मुझे भार स्वरूप मालूम होने लगता है। सहस्रों स्त्रियाँ मुझे ईर्ष्या की दृष्टि से देखती हैं, परन्तु मैं अपने दिल में उस ग़रीब वृद्धा और पोपली स्त्री से डाह करती हूं कि जिससे इसी नगर में मैं अपने बचपन में उबले हुए सिंघाड़े मोल लिया करती थी। बहुधा मुझे यह विचार हुआ है कि ग़रीब ही भले मानस, सच्चे और प्रसन्न चित्त होते हैं, तथा त्याग

और वैराग्य के जीवन ही में मनुष्य को जीवन का आनन्द प्राप्त होता होगा। साधू जी, तुम ने इस समय अपनी बातों से मेरे हृदय में एक तूफ़ान बरपा कर दिया है। मेरी समझ में नहीं आता कि मुझे क्या करना चाहिये ? मेरा क्या अन्त होगा ? इस जीवन का क्या सार है ? कुछ समझ में नहीं आता।"

सुन्दरी यह बातें कर रही थी कि साधू की एक अद्भुत दशा हुई। वह बोला--

"सुन, कान लगा कर सुन। मैं इस घर में अकेला नहीं घुसा और भी कोई मेरे साथ था, जो अब भी मेरे बराबर खड़ा हुआ है। वह कोई कौन है, जानती है ? वही ईश्वर, वही नारायण जिसको तेरी आँखें अभी नहीं देख सकीं, क्योंकि तू अभी उसको देखने की योग्यता नहीं रखती। यह वही ईश्वर, वही नारायण है, जो अपने भक्तों का सदा सहायक होता है। वही ईश्वर, जिस ने गज को ग्राह के फंदे से छुड़ाया, जिसने कंस को मार कर मथुरा वासियों के संकट दूर किये, अपनी सब से छोटी उँगली पर गोवर्द्धन पर्वत उठा कर ग्वाल—वालों की रक्षा की, कालीदह में कूदकर काली नाग को नाथा और नृसिंह का अवतार लेकर हरिण्यकश्यप को मारा, प्रहलाद भक्त की सहायता की, इस समय भी यहाँ पधारे और हमारी सहायता करने को तत्पर हैं। यदि ईश्वर, मेरी आँखों पर हाथ न धर देते, तो मैं तेरा मतवाला हो कर तेरे साथ पाप करने को तत्पर हो जाता। उन्होंने हम दोनों को पाप करने से बचाया। वही तुझ को भी पाप करने से मना करते हैं। मेरे मुख से जो कुछ बचन निकल रहे हैं, वह मेरे नहीं, ईश्वर के हैं, उनको कान धर के सुन—तुझको मैं बहुत दिनों से ढूँढ रहा हूं, पर तू बिसरी रही। अब मुझ से दूर न भाग। मेरे हाथ में हाथ दे, तो मैं तुझ को

अपने साथ सीधा स्वर्ग ले चलूँ। हे सुन्दरी, प्यारी सुन्दरी, उन बचनों को सुन; अपने अपराध को छोड़ और मेरे साथ बैठ, आँखों से आँसू गिरा। ईश्वर तेरे अपराध क्षमा करेगा।" यह कह कर साधू पृथ्वी पर गिर कर माथा टेकने लगा और सुन्दरी ने भी आँखों में आँसू भर कर हाथ जोड़े और माथा टेका।

जब सुन्दरी ने ज़मीन से सर उठाया, तो उसके हिचकियाँ लगी हुई थी। कभी वह अपने बचपन के याद करके रोती थी, कभी उसको सुक्खा जी सन्त याद आते थे, कभी वह गिड़गिड़ा कर कहती थी कि धरती क्यों न फट गई और बचपन ही में मैं क्यों न उसमें समा गई। मैंने बड़े होकर यह पापों का बोझ अपने सिर पर क्यों लिया? अब मेरा क्या परिणाम होगा?

रामानन्द ने जब सुन्दरी को इस दशा में देखा, तो वह अपने स्थान से उठा। उसने सुन्दरी के सिर पर हाथ रक्खा और कहा—"सुन्दरी, मन को धीरज दो। ईश्वर सुनता है, क्षमा करेगा।" यह कह कर साधू चुप हो गया। बाग़ के उस कोने में सिवाय सुन्दरी की हिचकियों के अब कोई दूसरी आवाज़ सुनाई न देती थी।

सुन्दरी की हिचकियाँ अभी अभी बन्द हुई थी। उसके आँसू कठिनता से रुके थे कि उसने गर्दन फेर कर देखा। उसकी दासियाँ, बांदियाँ उसका सिंगारदान उसके वस्त्र, फूलों के गजरे और हार लिये खड़ी थी।

वह चौंक कर बोली—"अखखाह! मुझे तो याद ही नहीं रहा। आज तो मुझ को एक दावत में जाना है। मैंने असमय रो कर अपना समय नष्ट किया। रोने-धोने से आँखें लाल हो जाती हैं और चेहरे का रंग भी फीका पड़ जाता है। दावत में जो स्त्रियाँ होंगी, मेरे सौन्दर्य्य और यौवन पर

आक्षेप करेंगी। स्वामी जी: यह दासियाँ बांदियाँ मेरा सिंगार करने और मुझे वस्त्र पहनाने आई हैं। आप कृपा करके महल के कमरे में जाकर बैठिये। पहले तो स्वामी जी ने चाहा कि वह सुन्दरी को दावत में जाने से रोकें परन्तु फिर कुछ सोच कर दूरंदेशी से काम लेना उचित समझा और पूछने लगे—"दावत में कौन कौन सम्मिलित होगा ?"

सुन्दरी ने कहा—"दावत करने वाले अर्थात् घर के मालिक के अतिरिक्त महेन्द्र और उसके कुछ फ़िलासफ़र मित्र होंगे। दो एक कवि भी बुलाये गये हैं, और कुछ शहर की स्त्रियाँ भी होंगी और सम्भवत: दो चार ऐरे-गैरे और शहर के बेफ़िकरे भी आ पहुंचेंगे।"

रामानन्द—"सुन्दरी, यदि तू जाना चाहती है तो जा, परन्तु मैं तेरे साथ रहूँगा। तुझ को अब क्षण भर के लिये भी अपने पास से अलग नहीं कर सकता। मैं भी दावत में तेरे साथ चलूँगा।"

सुन्दरी क़ह क़हा लगा कर हँसने लगी और बोली—"वाह जी वाह! ख़ूब!! लोग क्या कहेंगे कि सुन्दरी ने हृषिकेश के साधू से प्रीति की है और उसको साथ साथ लिये फिरती है।"

रामानन्द—"कहने दो। मैं बिना साथ चले न मानूंगा।"

सुन्दरी—"तुम्हारी खुशी—चलो।"

(३) मित्र-मंडली

दिल्ली के रईस तथा इम्पीरियल कौंसिल के मेम्बर राजा महबूब अली खाँ का बहुत ही सुसज्जित आनन्द-भवन था। झाड़, फ़ानूस और कंदीलों से सारा महल जगमगा रहा था। कमरों में अमूल्य कालीन बिछे हुए थे तथा सुन्दर कुरसियाँ और सोफ़े लगे हुए थे, और दरवाज़ों पर मख़मल के परदे लटक रहे थे। बिजली के प्रकाश से सारा मकान झल झल कर रहा था। बराबर के कमरे में खाने की मेज़ पर चाँदी के बरतनों में, छत्तीस प्रकार के भोजन चुने हुए थे। बिल्लौरी मदिरा- पात्र और गिलासों में शैम्पेन व शेरी झलक रही थी, और विलासी मित्र क़हक़हे पर क़हकहा लगा रहे थे। इसी समय सुन्दरी ने स्वामी रामानन्द के साथ कमरे में प्रवेश किया। सुन्दरी के प्रवेश करते ही कमरे के हर कोने से उसके स्वागत की आवाज़ निकली। दावत करने वाले ने बड़े आदर से कहा,—"स्वागत, चन्द्रमुखी स्वागत !"

एक बोला—"ऐ पुष्प ! तेरे बिना यह उपवन सूना प्रतीत होता था।"

दूसरे ने कहा —"ऐ कोकिल- बयनी ! तेरे बिना यह सभा उजड़ी हुई सी थी।"

तीसरे ने आश्चर्य्य युक्त हो कर देखा और कहा—"हँय ! यह चौदहवीं रात का चाँद किधर से निकल आया !"

चौथे ने सीने पर हाथ रक्खा और कहा—"प्राची दिशि शशि उगेऊ सुहावा !"

पाँचवें बोले —

"जन्म सिन्धु पुनि बन्धु विष, दिन मलीन सकलंक ।
सुन्दरि समता पाव किमि, चन्द्र बापुरो रंक ॥"

जब आदर और सम्मान हो चुका, तो सुन्दरी ने दावत करने वाले की ओर देखकर कहा—"राजा साहब ! मैं अपने साथ एक साधू को लाई हूँ। यह हृषिकेश के बड़े पहुंचे हुए फ़क़ीर है। इनकी ज़बान में जादू का सा प्रभाव है। जो ये कहते हैं, वही होता है। इनका नाम स्वामी रामानन्द है।"

राजा साहब ने स्वामी रामानन्द से बाते करते हुए कहा—"साधू जी, पधारिये। आपने बड़ी कृपा की, जो हमें दर्शन दिये। मुझे फ़क़ीर और साधुओं में बड़ा विश्वास है और मैं उनका हृदय से आदर करता हूं। आइये पधारिये ; मैं इन लोगों का जो यहां उपस्थित हैं, आप से परिचय करा दूं। यह देखिये। यह मिस्टर चुन्नी लाल साहनी हैं। आप बड़े ही योग्य बैरिस्टर हैं। आप मिस्टर महेन्द्र मेहता हैं। आप प्रसिद्ध बैरिस्टर होने के अतिरिक्त फ़िलासफ़ी के बड़े योग्य विद्वान हैं। मिस्टर रतन कुमार अंगरेज़ी साहित्य के ज्ञाता होने के अतिरिक्त फ़िलासफ़ी की भी जानकारी रखते हैं। आप क़ाज़ी खलीलुद्दीन साहब सेशन जज हैं। आप कविता का बहुत कुछ ज्ञान रखते हैं। ये नवाब मिरज़ा साहब हैं। दिल्ली के कवियों में आप का दम ग़नीमत है आपकी कविता का आत्मा तक पर प्रभाव पड़ता है। (नवाब मिरज़ा साहब—"हुजूर की क़द्रद नी है, नहीं तो मैं क्या और मेरी कविता क्या) और आप छोटे मियां साहब हैं। आपकी क्या प्रशंसा करूं। बस, यह समझिये कि आप हरफ़नमौला और बड़े ही हँस मुख युवक हैं। (फिर स्वामी जी की ओर देखकर साधू सन्तों को भला संसार के भोग विलास से क्या सम्बन्ध ?

परंतु आप यहां पधारे हैं, इसलिये यही उचित प्रतीत होता है कि दोनों स्त्रियों से भी आप का परिचय करा दूं। आप मिस गौहर हैं बल्कि यों कहना चाहिये कि अमूल्य गौहर हैं। आप मलका जान हैं। नाम ही से प्रकट है कि ये हम सब की सरताज हैं।

यह कह कर राजा महबूब अली खाँ अपनी जगह पर जा बैठे। अब महेन्द्र अपनी जगह से उठे और स्वामी जी के पास जाकर कान में कहने लगे--"क्यों यार अज़ीज़? मैंने क्या कहा था कि कामदेव का अपमान न करना। देखो, यह उसी का आकर्षण है, जो तुम्हें यहां तक खींच लाया। तुम बुद्धिमान हो, मेरी बात तुम्हारी समझ में आगई।"

रतन कुमार ध्यान पूर्वक स्वामी जी की ओर देख रहा था। अन्त में बोला –"अहा! हा! याद आ गया। मैं सोच रहा था कि स्वामी जी को कहीं देखा है। आप तो थियेटर में थे, किन्तु आपने तो वहाँ भी अपने वाज़ व प्रचार से न बक्शा और सम्भवतः यहाँ भी आप सारा मज़ा किरकिरा कर देंगे।"

स्वामी जी यह सब बातें सुनते रहे, परन्तु बोले कुछ भी नहीं।

मलका और गौहर दोनों सुन्दरी को ईर्ष्या की दृष्टि से देख रही थीं। सुन्दरी पर ग़ज़ब का यौवन था। गोरे गोरे रंग पर नीली रेशमी साड़ी और उस पर रुपहरी बेल की गोट, कलाइयों पर मीने और कुन्दन के पटरियों दार मोतियों के दस्तबन्द, नाक में हीरे की लौंग, कानों में अत्यन्त सुन्दर बुन्दे और गले में सुन्दर मोतियों का गुलूबन्द, आधे अस्तीनों की आस्मानी रंग की चोली, आधा सीना और आधी आधी बाँह खुली हुई। सुन्दरी इस समय अपने सौंदर्य के रोब से सारी सभा पर हुकूमत करती हुई एक

अद्भुत भाव से रामानन्द के पास एक सोफ़े पर चुपचाप बैठी हुई थी।

गौहर ने उठ कर उसके कान में कहा,—"यह नये प्रेमी कौन हैं? इसके मुख से तो वहशत बरसती है। यह आधा वहशी कहाँ से पकड़ लाईं?"

सुन्दरी उत्तर भी न देने पाई थी कि मलका बोली—"बहन, चुप रहो। वह प्रीति के मर्म की बातें हैं, इनमें दख़ल देना ठीक नहीं। मुझे तो इस जंगली से डर लगता है।"

सुन्दरी ने उत्तर दिया—"ख़बरदार, होशियार रहना। यह साधू है। जो कुछ तुम्हारे दिल में है और जो कुछ तुम कान में कहती हो, वह सब जानता और सुनता है। ऐसा न हो कि क्रोधित होकर कहीं तुम्हारे ऊपर क्रोध की दृष्टि डाल दे, तो तुम भस्म हो जाओ।"

मलका और गौहर यह सुनते ही सहम गईं और उनके मुख पीले पड़ गये।

इतने में राजा साहब ने अतिथियों से प्रार्थना की कि भोजन करने उठें। स्वादिष्ट से स्वादिष्ट अंगरेज़ी और हिन्दुस्तानी खाने मेज़ पर आये। मदिरा के पात्र खाली होने लगे और मेज़ के हर ओर से क़हक़हे लगने लगे।

राजा साहब मदिरा का गिलास हाथ में लेकर बोले—"देश और जाति के हित के लिये मदिरा पान कीजिये।"

सब अतिथियों ने अपने अपने गिलास ख़ाली कर दिये। रतन कुमार अपना खाली गिलास मेज़ पर रख बोला—"ऐ मित्र! तुम्हारे मुख से देश और जाति के हित की बात निकलना तो अनोखा ही मालूम होता है!"

राजा--" क्यों भाई, क्यों ? क्या हम देश-भक्तों की पंक्ति से अलग है ? "

रतन कुमार—" तुम्हें देश भक्ति से क्या प्रयोजन ? तुम तो जाति के बैरी हो। तुम और देश-भक्त ! तुम धन-भक्त हो सकते हो, अधिकारी-भक्त हो सकते हो, परन्तु देश-भक्त कैसे हो सकते हो ? तुम जाति को जोंक की तरह चिमटे हुए हो। जाति को तुम्हारा ही तो रोग है और तुम्हारे ही मुख से उसके जामे सेहत के शब्द निकले ! क्या खूब ! "

राजा साहब—" जाति को रोग है, इसीलिये तो जामे-सेहत की ज़रूरत है। यह तुम्हारी भूल है, जो तुम हमको देश-भक्तों में नहीं समझते। "

मियां—" क्या देश-भक्ति चौराहे पर खड़े होकर गरजने और अख़बारों के कालम के कालम काले करने पर ही निर्भर है ? देश- सेवा के तो बीसियों तरीक़े हैं। हर पुरुष अपने अपने स्वभाव और योग्यता के अनुसार देश—सेवा की राह पसंद करता है। "

रतन कुमार—" जी हाँ, आपका अभ्यास तो बड़े ओहदों पर कब्ज़ा करके धन पर अधिकार जमाने और प्रजा पर ज़ुल्म करने में अधिकारियों का हाथ बँटाने में है। "

राजा साहब—" मियाँ, देश को साम्यवाद के रोग ने ग्रसित कर रक्खा है। आन्दोलन से देश की शान्ति में विघ्न पड़ता है। अब तुम ही बताओ, यदि उसकी औषधि और चिकित्सा में अधिकारियों का हाथ न बँटाया जाय, तो देश का नाश होगा या नहीं ? देश की शान्ति में विघ्न हुआ नहीं कि जाति का सर्वनाश हुआ। गड़बड़ी तो देश के नाश होने का पेश-ख़ीमा है। हम इस की रोक थाम करते हैं, तो क्या यह जाति को सेवा नहीं हुई ? "

यह बातचीत हो ही रही थी कि एक साहब और पहुँचे। राजा साहब ने उनका परिचय कराया—"आप मिस्टर कृपलानी हैं। आप हमारे यहाँ की आर्यसमाज के प्रधान, संस्कृत, वेद और शास्त्रों के विद्वान हैं। आप माँस नहीं खाते। ईश्वर ने इनको संसार की न्यामतों से वंचित कर रक्खा है। ये उसको अपना सौभाग्य परन्तु मैं दुर्भाग्य समझता हूँ। अच्छा भाई, कुछ फल-फलारी ही खाओ। खाली बैठे रहना और मुँह ताकना तो अच्छा नहीं मालूम होगा।"

मिस्टर कृपलानी मुस्कराए और बोले—"अवश्य आपकी आज्ञा का पालन होगा।"

अभी मित्र लोग खाने की मेज़ पर से उठे न थे, मदिरा पान हो रहा था कि एक बारगी मिस गौहर चीख़ उठीं और बोलीं—"बड़ी कुशल हुई। मेरे गले में मछली का कांटा अटक गया था। बाबा रे! मैंने किसी तरह से निकाल लिया, नहीं तो ग़ज़ब हो हो जाता। मुझ पर ख़ुदा भी महरबान है। क्यों न हो! अल्लाह भी मुझको चाहता है!"

महेन्द्र—"तुमने क्या कहा कि तुम अल्लाह की भी मक़बूल नज़र हो? भाई प्रेम तो एक रोग हैं और जिसको वह रोग लग जाता है, वह सदा उदास और दुखित रहता है। यह तो एक बड़ी भारी निर्बलता है। यदि अल्लाह मियाँ में भी यह निर्बलता और दोष है, तो फिर हम में और उसमें अन्तर ही क्या रहा।"

गौहर—"तुम तो सदा बेहूदी बातें बका करते हो। मसख़रेपन की भी हद होती है, परन्तु तुम्हारे बकने की कोई हद नहीं। तुम्हारा तो स्वभाव ही ऐसा है।"

महेन्द्र—"तुम जिस क़दर भी गालियाँ देती हो, मुझे भली मालूम होती है बक़ौल हाफ़िज़—'जवाबे तल्ख भी ज़ेबद लबे लाले शकर ख्वारा।' चुप क्यों हो गई ? कुछ तो और कहो। मैं तो तुम्हारी बातों का इच्छुक हूँ। ईश्वर की सौगन्ध, बात करती हो, तो मालूम होता है कि फूल झड़ते हैं।"

जब दस्तर ख़ान उठ गया, तो किसी ने मलका जान से कोई समय की चीज़ छेड़ने की प्रार्थना की। दो एक ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया परन्तु मालिक-मकान ने अतिथियों से मुख़ातिब हो कर कहा—"सज्जनो, आपको मालूम है कि सौभाग्य से आज स्वामी रामानन्द जी की सी महान आत्मा हमारे बीच में इस समय उपस्थित है। हम लोगों का धर्म है कि यथाशक्ति हम उनका सम्मान करें। स्वामी जी त्यागी और ईश्वर-भक्त महापुरुष हैं। हम उनका सम्मान स्वादिष्ट भोजन, अच्छी शराबों या नाच रंग व सरोद से नहीं कर सकते। यह उनका अपमान होगा। स्वामी जी रूहानी भोजन का अभ्यास रखते हैं। इस कारण उचित है कि धर्म के कुछ चर्चे हों और हम स्वामी जी की उपस्थिति का लाभ उठावें। मुझे तो साधुओं और फ़क़ीरों में बड़ा विश्वास है। मैं तो हृदय से इनका आदर करता हूँ। हम दुनिया वालों के लिये इनका दम ग़नीमत है।"

मिस्टर कृपलानी—"स्वामी जी की आत्मा तो अवश्य महान होगी और आपका नाम तो दूर दूर तक प्रसिद्ध है परन्तु साहब ! असलियत तो यह है कि हमारे तीर्थ स्थानों के पंडों, महन्तों और वैरागियों ने तो धर्म का नाम बदनाम कर रक्खा है और मज़हब का तो ऐसा सत्यानाश किया है, कि तौबा ही भली। चोरी, डाका, चाल, धोकेबाज़ी, विषय-वासना यहाँ तक कि हत्या व खून भी। शायद ही कोई काम ऐसा होगा, जो इन्

दुराचारियों से बचा हो। अन्धेर यह है कि इन लोगों ने ईश्वर के नाम पर ऐसे-ऐसे ढकोसले बना रक्खे हैं कि जिसका ठिकाना नहीं। इन पंडों और महन्तों ने तो अल्लाह मियाँ के यहाँ अच्छी ख़ासी डाक बिठा रक्खी है, पोस्ट आफ़िस क़ायम कर रक्खा है, जान बीमा करालो, मनीआर्डर भेज दो, रजिस्ट्री भेज दो और इस हाथ दो और उस हाथ लो। ईश्वर के नाम से इन्होंने जायदादें और जागीरें खड़ी कर रक्खी हैं। ये ग़रीब और मूर्खों को दोनों हाथों से लूटते हैं और विषयवासना में इस सम्पत्ति का नाश करते हैं।"

रतन कुमार—"तो भाई, पितरों का श्राद्ध करना, पिंडा और पानी देना तो हमारे सनातन धर्म का पहला विश्वास है। इसमें इन बेचारों का क्या अपराध है?"

कृपलानी—"सनातन धर्म! सनातन धर्म!! इनका दौलत से घर भरना, श्राद्ध करना, पत्थर और मिट्टी की मूर्तियों को पूजना, जानवरों और वृक्षों को देवी देवता मानना, बकरियों, भैंसों और भेड़ों का बलिदान चढ़ाना, दरगाहों और ताज़ियों पर नज़र—नियाज़ चढ़ाना, क़बरों पर फूल और चादर चढ़ाना, शीतला और हैज़े के रोगों का पूजना, यह सनातन धर्म है? यह जाल है, धोखा है, ढकोसला है और कुछ नहीं। सनातन धर्म वह है जिसका प्रचार स्वामी दयानन्द ने किया—केवल एक ईश्वर को मानना और वेद पर विश्वास रखना सनातन धर्म है और सब ढकोसला है।"

स्वामी रामानन्द का, यह सुनते ही कि मिस्टर कृपालानी आर्य समाजी है, एक रंग से दूसरा रंग हो गया था। यह बात चोत सुन कर तो वह भय और क्रोध से थर्राने और सुन्दरी का मुख देखने लगे। सुन्दरी के मुस्कराने से उनका क्रोध कुछ कम

हुआ। वह इरादा करके आये थे कि मौन व्रत को न तोड़ेंगे, इस लिये चुप ही रहे।

मि० साहनी—"कृपलानी जी, माना की सनातन धर्म वही है, जिसका स्वामी दयानन्द ने प्रचार किया। आपके कहने से यह भी माने लेते हैं, कि ईश्वर केवल एक है और जैसा आप बयान करते हैं वह वैसा ही सर्वशक्तिमान, महान और दयालु है। परन्तु एक बात समझ में नहीं आती कि यदि ईश्वर ऐसा ही सर्व-शक्तिमान, दयालु और सर्वगुण-सम्पन्न है, तो संसार का प्रबन्ध जो उसका बनाया हुआ है, ऐसा "दरहम-बरहम" क्यों है? इस क़दर हत्या, अत्याचार, विवशता, दरिद्रता, शोक व दुःख, विपत्ति अन्याय, बलात्कार संसार के प्रबन्ध में क्यों दृष्टिगोचर होता है और ईश्वर क्यों इसको रवा रखता है। इस सब कुप्रबन्ध और खेल की आवश्यकता ही क्यों हुई। मैं तो यह पूंछता हूं कि यह सब सृष्टि रचने की, जिसको आप माया और मिथ्या बताते हैं, आवश्यकता ही क्या थी? यह संसार क्यों बनाया गया?"

कृपलानी—"क्या ख़ूब! ईश्वर ने कुछ प्रकृति के नियम, जो अटल हैं, बना दिये! आपकी शिक्षा और ख़बरदारी के लिए वेद की रचना की और उसमें सब सिद्धान्त लिख दिये! अब यदि आप उन पर अमल नहीं करते किन्तु उनके विरोध में चलते हैं और इस लिये अपने किये का दंड पाते हैं, तो इसमें ईश्वर का क्या अपराध है? जब आप संसार के नियम तोड़ने पर तुले ही हुए हैं, तो संसार में इन सब कष्टों का प्रकट होना आवश्यक है। ईश्वर को दोष देना व्यर्थ है।"

मि० साहनी—"आप तो कहते हैं, वह सब कुछ देखता है, सब कुछ जानता है, उससे कोई बात छिपी नहीं है, और वह अटल है, तो उसको तो मालूम होना चाहिये था कि जिस संसार

की वह रचना कर रहा है, उसको यह गति होनी है। फिर ऐसे संसार को रचने की क्या आवश्यकता थी ? यह क्यों रचा गया ?"

कृपलानी—"कारण और आवश्यकता ! वह अपने प्राणियों की परीक्षा करना चाहता था कि कौन कितने पानी में हैं ? कौन उसकी आज्ञा मानता और सीधी राह चलता है ? कौन उससे पृथक होकर ग़लत राह चलता और नाश होता है ? वह आपका तमाशा देखना चाहता था।"

रतन कुमार—"अरुल्लाह ! तो यों कहिये कि अल्लामियाँ भी तमाशबीन हैं।"

महेन्द्र—"जी हाँ–क्या ख़ूब ! हमारी जान गई, आप की अदा ठहरी।"

साहनी—"तो भई, फिर मनुष्य और ईश्वर में अन्तर ही क्या रहा ? हम लोग भी अपनी सम्पत्ति और अपने भोग-विलास का तमाशा देखा करते हैं और अल्लामियाँ अपनी सृष्टि का तमाशा देखते हैं।"

क़ाज़ी खलीलुद्दीन—"मियाँ, तुम ना-समझे हो। दोनों में फ़र्क़ है। हम तो अपनी ही तबाही और बरबादी का तमाशा देखते हैं और अल्ला मियाँ दूसरों की तबाही–बरबादी का तमाशा देखते हैं। अन्तर यही है कि वह बहुत बड़े और पुराने तमाश-बीन हैं। हम तुम किस गिनती में हैं।"

नवाब मिर्ज़ा—"लाहौल बिला ! क़ाज़ी साहब ! यह आप कैसे क़लमात कुफ़्र ज़बान पर लाते हैं।"

मिस्टर साहनी—"हाँ भई, आश्चर्य तो हम को भी है कि कहाँ तो वह पाँच समय की नमाज़, रोज़ा व ज़कात और कहाँ यह कुफ़्र व इलहाद। क़ाज़ी साहब ने थोड़े दिन से चोला ही

बदल डाला है। मूँछ दाढ़ी का सफ़ाया करके ख़ासे अच्छे जंटिलमैन बन गये हैं। आज तो कुछ सुरूर भी है।"

क़ाजी ख़लीलुद्दीन—"अरे भई, क्या बतायें। बड़ी लम्बी कहानो है, परन्तु है बड़ी रोचक।"

रतन कुमार—"कहानी रोचक है, तो अवश्य कहिये। समय तो किसी तरह कटे। यहाँ तो स्वामी जी की आव-भगत ने सभा का मज़ा किरकिरा कर दिया।"

काज़ी—"ऐ साहब हमारी तो एक स्वप्न ने आँखें खोल दीं।"

छोटे मियां—"वल्लाह! क्या फ़िक़रा है। कुरबान जाइये, इस जिद्दत के फ़रमाते हैं स्वप्न ने आँखें खोल दीं।"

महेन्द्र—"तो फिर देर क्या है?"

क़ाज़ी—"अरे भाई, आप लोगों को तो मालूम है कि हम तो नमाज़ी आदमी थे—नमाज़ रोज़े के पाबन्द, जन्नत के आरज़ू-मन्द। एक रोज़ रात को प्रार्थना के समय हम ने दरगाह इलाही में मारूज़ किया कि या अल्लाह! जन्नत तो न मालूम कब नसीब हो, मुमकिन है कि अक़ीदा ही कम होने लगे, तो ख्वाब ही में एक दिन जन्नत दिखा दे ताकि तसकीन तो हो जाय। बस, प्रार्थना के बाद, आंख जो लगी, तो किसी ने कहा तुझ को जन्नत दिखा दी जायेगी, बिस्तर से उठ और चल। यह सुना ही था कि हम खुश-खुश उठ बैठे और इन "ख्वाजा खिज़र" के साथ हो लिये। बड़ी दूर का सफ़र तै किया। न मालूम आसमान के कै "तबक़े" फलांगते चलते चलते आख़िरश एक मुक़ाम पर पहुंचे। निहायत सर्द मालूम होता था गोया "कुररत-बर्फ़स्तान" है। दूर से बड़ा सिलसिला जईय्यद कोह शुरू से आख़िर तक बरफ़ से ढका हुआ दिखाई दिया। उस पर ऐसी चमक थी कि आंख न ठहर सके।

"ख्वाजा ख़िज़र ने कहा कि यही जन्नत है। निगाह उठा कर देखा, तो आँखें चौंधिया गयीं। बड़े बड़े महलात संगमरमर के बने हुए थे। उनके बुर्ज और गुम्बद जवाहर, निगार, मोती और हीरों से लदे हुए, हौज़ और नहरें बिल्लौर में, पानी जैसे जूए शीर। फल फूल लेकिन सब सफ़ेद। मिस्ल बुर्राक़ कहीं रंग का नाम नहीं। क़रीब पहुंचे, तो देखा कि जन्नत के तीन तबके हैं। दरमियानी तबक़े में महलात हैं। यहाँ फ़रिश्ते और हूरें रहती हैं। यह नबियों, पैग़म्बरों, देवियों और देवताओं का मसकन है। चोटी पर जो बुकए नर मालूम होती थी और चकाचौंध से कुछ दिखाई न देता था, हमें बताया गया कि यहां अल्ला मियाँ रहते हैं।

"नीचे के तबक़े में दामन कोहसार में था। हर चहार तरफ़ हुजरों की क़तारें थीं। इसमें ख़ुदा परस्त और अल्ला वाले लोग, जिन्हें जन्नत नसीब हुई थी, इबादत इलाही में मसरूफ़ थे।

"हम अपने ख्वाज़ा ख़िज़र के साथ एक हुजरे में पहुँचे तो देखा कि एक पुराने ऋषि जिनका रोंआ रोंआ सफ़ेद हो रहा था, आँखें बन्द किये आसन जमाये बैठे हैं। बदन पर एक लंगोटी है और हाथ में माला। हमारी आहट पा कर उन्होंने आंखें खोलीं, तो हम ने पूछा कि ऋषि जी, आप की उमर क्या है?

"ऋषि—भाई, कोई तीन हज़ार वर्ष।

"क़ाज़ी—आप यहाँ खाते पीते क्या है?

"ऋषि—अमृत-अमृत और क्या!

"क़ाज़ी—आपका वक्त़ किस तरह कटता है?

"ऋषि—ज्ञान-ध्यान में। ईश्वर के ध्यान में।

"क़ाज़ी—तो आप यहाँ बिलकुल ख़ुश ख़ुर्रम हैं?

" ऋषि—बच्चा, हम लोगों की शारीरिक इच्छाएं अब बाक़ी नहीं रही, इसलिये अब सुख और दुख से भी कोई सरोकार नहीं रहा।

" क़ाज़ी—ग़रज़ कि आप कोई तकलीफ़ महसूस नहीं करते ?

" ऋषि—बच्चा, यहाँ जाड़ा बहुत है।

" क़ाज़ी—तो आप बिजली की अंगीठियां क्यों काम में नहीं लाते ?

" ऋषि—क्या कहते हो ? बिजली की अंगीठियां क्या चीज़ होती हैं ?

" मैं ने ब-तफ़सील समझाने की कोशिश की तो ऋषि ने ताम्मुल करके कहा—

" ऋषि—बच्चा मालूम होता है कि तीन ही हज़ार बरस में दुनिया वालों ने बहुत तरक़्क़ी करली है। हमारे ज़माने में तो अलाव पर हाथ पैर तापा करते थे और यहाँ कापूर की रत्नदीप जलाते हैं, यहाँ परिवर्तन नहीं होता। हर एक चीज़ अटल है।

" क़ाज़ी—ग़रज़ कि आप मुतमईय्यन हैं।

" ऋषि—एक बात के सिवाय।

" क़ाज़ी—वह क्या ?

" ऋषि—देखो, यह अमर होना ज़रा थकाने वाला है। इसका अंत ही नहीं, शान्ति की आशा नहीं।

" यह सुन कर हम आगे बढ़े तो दूसरे तरफ़ के हुजरों में से एक में एक मुसलमान पीर मर्द देखा कि मुनाजात में मसरूफ़ हैं, विसाल हक़ के लिये आहोज़ारी कर रहे हैं। हूरें शराब नहुर के जाम लाकर उनके होठों से लगाती हैं हयात जावदानी के गुण गाती हैं लेकिन यह एक नहीं सुनते। विसाल विसाल पुकार रहे हैं और गिरियाओज़ारी से अपने तईं हलकान कर

रहे हैं लेकिन बिसाल मयस्सर नहीं आता। हमने इनको इस हालत में देख कर कहा कि मर्दे खुदा, बिसाल मयस्सर नहीं आता तो उस पर लानत भेजो। कब तक गिरियाओज़ारी करोगे। पीर मर्द यह सुनते ही लगे गला फाड़ कर चीख़ने— शैतान शैतान लाहौल विलला शैतान मऊज़ विला। हम हैरत ज़दा हुए कि इतने में दो तीन फरिशते आ पहुंचे और लगे ख्वाजा खिजर को ऊपर ऊपर से नीचे तक देखने। कभी चेहरा देखते हैं, कभी पीठ और कभी हाथ पांव देखते हैं। ग़रज़ कि कई मिनट तक यही तमाशा होता रहा। आख़िर उनमें से एक ने कहा "नारा नहीं नारो ऐराफ़ी है।" फ़रिशते तो पीर मर्द को समझाने में मसरूफ़ हुए और हमने अपना रास्ता लिया। ख्वाजा खिज़र ने कहा, जन्नत तो देख ली, अब जहन्नुम भी देखोगे? हम ने कहा कि भर पाए, हम को न अब जन्नत का शौक़ रहा न जहन्नुम का ख़तरा। बस, वापस चलिये। इतने में आंख खुल गई। उस रोज से अब रिंद मशरब हैं और मिरजा ग़ालिब के इस शेर को जपते हैं कि—

"हम को मालूम है जन्नत की हक़ीक़त लेकिन—
दिल के बहलाने को ग़ालिब यह ख़्याल अच्छा है।"

रतन कुमार—"तो भाई हिन्दू और मुसलमान का अन्तर वहाँ भी है। हिन्दूओं का स्वर्ग अलग और मुसलमानों की जन्नत अलग है?"

क़ाज़ी—"जी हां, यह फ़ितना तो वहीं से बरपा हुआ है।"

साहनी—"तो इन बेचारे अल्ला वाले लोगों को भी बस हयात आबदी पर ही क़नात करनी पड़ती है। बिसाल हक़ फिर भी नसीब नहीं होता?"

छोटे मियां —" अजी बिसाल हक़ न सही, बिसाल हूर तो होता होगा।"

महेन्द्र —" वल्लाह ! यार, बात पते की पूछी।"

क़ाज़ी —" मियां, यही तो गज़ब है कि विसाल हूर भी मयस्सर नहीं आता। हूरें और अप्सराएं तो सब की सब इन फ़रिश्तों, पैग़म्बरों और देवताओं के तसर्रुफ़ में आ जाती हैं।"

रतन कुमार —"तो यह तो अल्ला मियाँ की बड़ी बे-इन्साफ़ी है !"

क़ाज़ी —" बाबा, अल्ला मियां का क्या क़ुसूर है। उन बेचारों तक कोई बात भी पहुंचने पाए। यह फ़रिश्ते तो किसी बात की उनको कानों कान ख़बर नहीं होने देते।"

छोटे मियां —" यह बात तो कुछ समझ में नहीं आई।"

क़ाज़ी —" भाई दरियाफ़ करने से जो हक़ीकत हाल मालूम हुआ, वह यह है कि इन मादूदे चन्द फ़रिश्तों, पैग़म्बरों और देवताओं ने अपनी एक ज़बरदस्त टुकड़ी बना रक्खी है और तमाम इन्तज़ाम व इख़्तियार अपने क़ाबू में कर रक्खा है। अल्ला मियां बेचारों को तो बस ताज़ीम, तकरीर, इबादत और मुनाजात से खुश रखते हैं और इन्तज़ाम व इख़्तयार, अपना क़ायम किये हुए हैं। वह बेचारे भी दुनिया बना कर और उसका इन्तज़ाम करते करते कुछ थक से गए हैं। फिर जानो तक़ाज़ाए सिन भी हैं। उन्होंने भी ढील दे रक्खी है और इनको बाइख़्तियार कर दिया है। बस फिर क्या है, चैन ही चैन लिखता है। इनसान हो या फ़रिश्ता मुतलकुल एनानी तो बुरी चीज़ हैं। जब ऐश इशरत में फँसे और मुतलकुल एनानी की आदत पड़ गई, तो फिर इनसाफ़ या इन्तज़ाम क्या ख़ाक क़ायम रहेगा।"

महेन्द्र —" तो यों कहिए कि अल्ला मियां बेचारों की भी वही दशा है, जो यूरोप के राजाओं की। प्रबन्ध व अधिकार सब

मंत्रियों और अमीरों के हाथ में उनका केवल आदर व सत्कार और बस बाक़ी अल्लाह का नाम है ।"

रतन कुमार—"देखिए तो अब रहस्य खुला—जब ही संसार में कुप्रबंध और अन्याय फैला हुआ है ।"

मिस्टर साहनी—"तो यह बेचारे ईश्वर भक्त और अल्ला वाले लोग फ़रिश्तों के दरजे तक भी न पहुंचने पाये ।"

क़ाज़ी—"बाबा, वहां तो मख़सूस तादाद के लिए गुंजायश है । शुरू शुरू में लोग चांद सूरज आग पानी दरख़्त जानवर और बहुत सो देवी देवताओं की पूजा करते थे । वहदऊ ला शरीक पर कौन ईमान लाता था । जब ख़ाल ख़ाल लोग हक़ीकत और वह दानियत के क़ायल हुए और ख़ुदा की परस्तिश और इबादत करने लगे, तो अल्ला मियां ने उनको जन्नत में अपने क़रीब जगह दी और फ़रिश्तों का मर्तबा बख़शा और अब तो ख़ुदा-परस्तों और अल्ला वाले लोगों की ऐसी बहुतायत हो गई है कि अल्ला मियां अगर एक जन्नत और बना दें तो काफ़ी न हो । जब इन आम लोगों से जन्नत भरने लगी तो फ़रिश्तों को इन पर क्या फ़ौकियत रही । अब तो जन्नत और दुनिया का सब इन्तज़ाम इन देवताओं और फ़रिश्तों के इख़्तयार में है । वह क्या बावले हैं कि इस मजमए कसीद को अपना शरीक करके अपना इख़्तयार और हज़ा मिटाएं ।"

रतन कुमार—"ठीक है भाई, यदि हम उनके स्थान में वहां होते तो हम भी यही करते ।"

महेन्द्र—"मरहबा ! मरहबा !"

रात का पिछला पहर था, तारे डूबने लगे थे, पौ फटने वाली थी । अरुणशिखा बांग दे रहा था । सभा का रंग भी फीका पड़ गया था । सुराही व सागर खाली पड़े थे । सोमबत्ती एक एक

करके बुझती जाती थी। घर के मालिक कुरसी पर बैठे ही बैठे ऊंघ रहे थे। मिस्टर कृपलानी तो इन शराबियों की लनतरानियों से बेज़ार होकर आधी रात गुज़रते ही उठ कर चले गये थे। ख़्वाजा ख़लीलुद्दीन और मिस्टर साहनी भी बात चीत और बहस के ख़तम होने पर चल दिये। रतन कुमार शराब के नशे में चूर मेज़ के तले क़ालीन पर औंधे पड़े थे। नवाब मिरज़ा मिस गौहर को अपनी कविता सुनाते और उन से दाद ले रहे थे। छोटे मियाँ कुछ देर तो कुफ़्र व ईमान का रोचक शास्त्रार्थ सुना किये, अन्त में तंग आकर उन्होंने मलकाजान का हाथ पकड़ा और कमरे के एक कोने में सोफ़ा पर ले जाकर उनसे प्रेम की बातें करने लगे। मिस्टर महेन्द्र एक आराम कुरसी पर लेटे किसी फ़िलासफ़ी की पुस्तक का अध्ययन कर रहे थे और थोड़ी थोड़ी देर बाद सुन्दरी से इशारा व संकेत भी करते जाते थे। स्वामी रामानन्द पर यह समय बहुत गरां गुज़रा था। शोक और क्रोध को लोहू के घूंट की तरह पीने और चुप रहने पर बाध्य थे। सुन्दरी भी किसी ख़याल में थी। जब पौ फटने लगी, तो स्वामी रामानन्द ने सुन्दरी को उठने का संकेत किया और उसका हाथ पकड़ कर उठ खड़े हुए, और उस सभा के सभासदों को बुरा भला कहते, लानत-मलामत करते चल दिये।

---

(४) काया पलट

सूर्य अभी अभी उदय हुआ था। राज पथ के दोनों ओर मकानों की छतों पर थोड़ी थोड़ी धूप मालूम होती थी। बाज़ार में मेहतर धूल उड़ा रहे थे और किसी किसी दूकान पर हलवाई कढ़ाईयाँ और थाल साफ़ कर रहे थे। स्वामी रामानन्द, सुन्दरी को साथ लिये क़दम बढ़ाये हुए जा रहे थे। क्रोध व घृणा से उनका मुख लाल हो रहा था। ज्योंही कि उनका ध्यान अपने वस्त्रों पर गया, उन्होंने रेशमी अचकन, मंडील और जूता बदन से उतार कर फेंक दिया और सुन्दरी से बोलेः—

"सुन्दरी, तूने इन मलेच्छों और नास्तिकों की बातें सुनी। इन्होंने तो ईश्वर तक का अविश्वास करने और ठट्ठा उड़ाने में कोई कसर नहीं रक्खी; विशेष कर उस आर्य्य के मुख से तो इस तरह दुर्वचन निकले जैसे मोहरी या गन्दे नाले से दुर्गन्ध निकलती है। प्यारी सुन्दरी ! तू ने कुकर्म भी देखे। एक मदिरा पिये औंधा पड़ा था। दूसरा वेश्या का चुम्बन कर रहा था। वह दुष्ट महेन्द्र, तेरी ओर लालसा की दृष्टि से देखता था जिसको देख कर मेरे शरीर में अग्नि जल उठती थी। इन सब बातों को देख और विचार कर क्या तू अब भी इन लोगों का साथ न छोड़ेगी और घोर पाप के इस अन्धकार में पड़ी रहेगी ?"

सुन्दरी रात भर की जगी हुई थी। उसकी आँखें नींद से भारी हो रही थीं। जो कुछ उसने सुना और देखा था, आज उसकी तबियत में इस सब से घृणा हो रही थी। दिल शोक से बैठा जाता था। वह एक ठंडी साँस लेकर बोली—"स्वामी

जी, मैं तो इस जीवन से आरी आगई हूँ। कुछ समझ में नहीं आता कि चैन कैसे मिलेगा। इस समय मेरे मुख से अंगारे निकल रहे हैं, दिल बैठा जा रहा है, हाथ पैरों की जैसे जान सी निकल गई है और इस क़दर थक गई हूँ कि यदि हज़ारों प्रकार की वस्तुएं भी मेरे सामने रख दी जावें, तो उनको हाथ लगाने की शक्ति नहीं रखती। सोचते सोचते मेरा सिर चकरा गया है और फिर भी समझ में नहीं आता कि इस जीवन में धैर्य्य और शान्ति मिलने की कोई आशा हो सकती है या नहीं।"

स्वामी०—"धीरज धर, सुख चैन की घड़ी अब दूर नहीं।"

रामानन्द और सुन्दरी अब सुन्दरी के मकान के क़रीब पहुँच गये थे। मकान के सामने घास पर एक बेंच पड़ी थी। सुन्दरी थक कर उसी पर बैठ गयी और अत्यन्त विवशता और निराशा की दृष्टि स्वामी जी पर डाल कर बोली—"साधू बाबा, अब बताओ मुझे क्या करना चाहिये कि जिससे चैन आये।"

रामानन्द—"उसी ईश्वर का जो तेरी खोज लगाता, यहाँ तक आया है, पल्ला पकड़ ले। वह तुझे इस पाप और दुख के जीवन से हटा कर सुख और चैन की राह दिखायेगा। सुन, यहाँ से दो दिन की राह पर यमुना किनारे बाई का स्थान है। वहाँ साधू औरतें और योगिनें अपनी मंडली बनाकर रहती हैं तथा ईश्वर भजन और ईश्वर भक्ति में अपना पवित्र जीवन व्यतीत करती हैं। राना संग्रामपुर की बहिन धन-दौलत, राज-पाट और महलों को छोड़ कर योगिन हो गई है, और इन्हीं योगिनों के साथ रहती है। वह स्थान इसी के नाम से बाई का स्थान कहलाता है। मैं तुझे वहाँ ले चलूँगा और बाई के पास छोड़ दूंगा। तू बाई के स्थान में रह कर इन भगतिनों के सत्संग में अपना जीवन पवित्र करना। तुझ को ईश्वर अवश्य दर्शन देंगे और तुझे मोक्ष

प्राप्त होगा। मैं तुझे आज ही यहाँ से ले चल कर बाई के स्थान में पहुंचा दूंगा।"

सुन्दरी ने यह सुन कर आश्चर्य्य की बाणी में कहा—"राना संग्रामपूर की बहिन और साधू हो गई!"

रामानन्द—"हाँ, खास राना संग्रामपूर की बहिन, जो रानी का दरजा रखती थी, ग़रीब योगिन की तरह अपना जीवन ईश्वर भजन में व्यतीत कर रही हैं। वह तेरी सहायक होंगी और तुझ को अपनी बेटी की तरह रक्खेंगी।"

सुन्दरी यह सुनकर उठ खड़ी हुई और बोली—"मैं चलने को तैय्यार हूं। साधू जी, मुझ को बाई के स्थान पहुंचा दो।"

स्वामी जी सुन्दरी का यह विचार सुन कर अपनी सफलता पर सन्तुष्ट होते हुए कहने लगे—"सुन्दरी, मैं तुझ को अवश्य बाई के स्थान पर पहुंचा दूंगा। वहाँ तुझ को एक कोठरी में अकेला बन्द कर दूंगा। तू माथा टेक कर और नाक रगड़ कर ईश्वर से अपने अपराधों की क्षमा माँगना और अपने आँसुओं से अपने पापों को धोना; तब तू इस योग्य होगी कि बाई के स्थान की भगतिनों के सत्संग में रहकर अपना जीवन पवित्र कर सके। मैं जिस कोठरी में तुझे बन्द करूंगा, उस पर अपने हाथ से मुहर लगा दूंगा। जब तू अपने पापों को धो चुकेगी, ईश्वर साक्षात तुझे दर्शन देंगे। कोठरी का ताला खोल कर तेरे कंधे पर अपनी दया का हाथ रक्खेंगे और स्वयं तेरे आँसू पोंछेगे। उस समय तुझे ऐसा आनन्द आवेगा कि तू मग्न हो जायगी और जिस सुख और चैन के लिए तू इस समय तड़प रही है, वह तुझ को भरपूर प्राप्त होगा।"

सुन्दरी ने दुबारा कहा—"स्वामी, मुझे बाई के स्थान पर शीघ्र पहुंचा दो।"

यह सुनकर स्वामी जी की खुशी से बाछें खिल गईं और एक क्षण के लिये लहलहाती हुई हरिआली, चटकती हुई कलिओं, खिले हुए पुष्पों, झूलती हुई शाखाओं की शोभा और चहचहाते हुए पक्षिओं के राग—इस प्रकृति के यौवन का डरते डरते स्वाद लेने लगे।

कुछ देर के लिये वे उसमें मग्न हो गये, परन्तु ज्योंही उनको ख़याल आया कि यह वृक्ष और फैली हुई बेलें अपनी छाया सुन्दरी के प्रसाद पर डाल कर उसके कर्मों की गन्दगी और पापों को छिपा रही है, त्यों ही उनकी दृष्टि में यह प्रफुल्लता और वायु पापमय प्रतीत होने लगी और उनकी तबियत उदास होने लगी। वे जोश और क्रोध में आकर कहने लगे —

रामा०—"सुन्दरी, हम को यहाँ से अब भागना और मुँह मोड़ कर पीछे भी न देखना चाहिये। हाँ, यहाँ से चलने से पहले हम को इस सब माल असबाब, धन और साज-सामान को जो तेरे पापों और अपराधों के साक्षी हैं, नष्ट कर देना चाहिये, मिटा देना चाहिये, नहीं तो यह मूल्यवान परदे, क़ालीन, पलंग, तेरे चमकते दमकते जोड़े, शृंगार का सामान, सब के सब हज़ार ज़बान से तेरे पापों और गुनाहों का प्रमाण देंगे। इन सब में भूतों का वास है। यह जंगल में भी तेरा पीछा न छोड़ेंगे। उचित यह है कि हम यहाँ से चलने के पहले इस सब को नष्ट कर दें। सुन्दरी, शीघ्रता कर और अपने नौकरों-चाकरों को आज्ञा दे कि इस सब धन दौलत और सामान को चिता बना कर उसमें फूंक दें।"

सुन्दरी राजी हो गई और बोली—"साधू बाबा, जो तुम चाहो करो। यह तो मैं भी मानती हूँ कि कभी कभी भूत और जिन जानदार और बेजान चीज़ों पर भी अपना क़बज़ा कर लेते

हैं और भिन्न भिन्न प्रकार की सूरतें बना कर हम को डराने लगते हैं। सामने वाले हौज़ के क़रीब जो संगमरमर की मूर्ति खड़ी है, एक दिन मैंने अपनी आँखों से देखा, उसने गर्दन फेर मेरी ओर दृष्टि की और देखते देखते फिर स्थिर हो गई। मैंने इस घटना का वर्णन महेन्द्र से किया, परन्तु वह हँसी उड़ाने लगा। मुझे तो विश्वास है कि इस परी की मूर्ति में कोई जादू है। एक नवाबज़ादा जो मेरे यौवन व सौन्दर्य से उदासीन रहा करता था, इस मूर्ति को देख कर स्वयं मोहित और मस्त हो गया। मुझे तो विश्वास हो गया है कि इस महल और बाग़ में कुछ जादू का कारखाना है। फिर भी मुझे ख़याल आता है कि इन अप्राप्य चित्रों और मूर्तियों, मूल्यवान क़ालीनों और परदों का भस्म करना और नाश करना ज्यादती होगी। कुछ चीजों की सुन्दरता, बनावट, कुछ चित्रों की रंगामेज़ी अनुपम है और इन पर अत्यन्त धन व्यय हुआ है। मेरे ख़याल में तो इनको नाश न करना चाहिये परन्तु तुम इन कुल बातों की ऊँच-नीच से परिचित हो; जो उचित समझो करो।"

यह कह कर सुन्दरी साधू के साथ महल में घुसी और सब द्वारपालों, दासों, चौकीदारों, चपरासियों, दासियों, बाँदियों को बुला कर आज्ञा दी कि यह साधू बाबा जो कुछ आज्ञा दें, उसका पालन करो और यह याद रक्खो कि यदि तुम इनका कहना न मानोगे, तो यह एक क्षण में तुम को जला कर भस्म कर देंगे। सुन्दरी यह सुन चुकी थी और विश्वास करती थी कि यदि कोई साधू या वैरागी रुष्ट होकर किसी व्यक्ति पर क्रोध की दृष्टि डाल दे, तो वह मनुष्य जल कर भस्म हो जाता है।

स्वामी रामानन्द ने नौकरों चाकरों को शीघ्र आज्ञा दी कि आँगन में लकड़ियों और झंकाड़ों का अम्बार लगा कर एक चिता

तैय्यार करो। घर का जितना साज व सामान है, सब को चिता पर एकत्रित करें और मिट्टी का तेल छिड़क कर उसमें आग लगा दो, ताकि वह जल कर भस्म की ढेरी हो जाय।

पहले तो नौकर-चाकर यह आज्ञा सुन कर आश्चर्य में आ गये और चित्र-लिखे से खड़े रहे। फिर उन्होंने अपनी स्वामिनी की ओर देखा। जब उधर से कोई संकेत न हुआ और स्वामी जी ने ललकार कर कहा कि खड़े हुए मुँह क्या ताकते हो, जो आज्ञा दी गई, उसका पालन करो, तो उनमें से कुछ ने लकड़ियां एकत्रित करनी आरम्भ कीं; औरों ने भी थोड़ी देर बाद उनका अनुकरण करना आरम्भ कर दिया।

जब स्वामी जी की इच्छानुसार काम होने लगा और आँगन में लकड़ियों का अम्बार लगने लगा, तो रामानन्द सुन्दरी से बोले—" पहले तो मैंने यह सोचा था कि तेरा सब धन दौलत यहां के किसी महन्त जी को बुला कर उनके सुपुर्द कर दूं कि ग़रीब बच्चों और विधवाओं को बांट दें ताकि उनका भला हो; परन्तु फिर मुझ को ख़याल आया कि इस से ईश्वर क्रोधित होगा। यह धन दौलत सब कुछ तू ने अपने पापों से कमाई है, निर्धन बच्चों और स्त्रियों को पाप की कमाई देकर उनको भी दोष का भागी करना है और यह अनुचित है, इसलिये यही ठीक है कि इसको अग्नि-कुंड में डाल कर भस्म कर दिया जाय। "

यह कह कर स्वामी जी नौकरों से बोले और ज़ोर से ललकार कर कहने लगे शीघ्रता करो, शीघ्रता करो और लकड़ियां लाओ, गूदड़ और झंकाड़ जमा करो, मिट्टी का तेल छिड़को और आग लगाओ, देर न करो।

फिर सुन्दरी की ओर देख कर बोले कि यह चमकते दमकते

कपड़े अब तेरे योग्य नहीं। घर में जा, अपनी किसी दासी या बांदी से कोई पुराना वस्त्र माँग उसको धारण कर।

सुन्दरी ने साधू की आज्ञा पर सर नवाया और उसके पालन में लग गई।

इस समय तक नौकरों चाकरों ने आंगन में लकड़ियों और झंकाड़ों का अम्बार लगा कर स्वामी की आज्ञानुसार मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी थी। जब आग सुलगने लगी तो मेज़ें और कुरसियां, क़ालीनें और गद्दे, मखमली और रेशमी परदे, आबनूस की आलमारियां और तिपाइयां ग़रज़ कि बहुत सा सामान सजावट की चीज़ें कमरों से निकाल-निकाल कर जलती हुई आग में फेंकना आरम्भ किया। पहले तो उनको इस पागलपन की हरकत पर आश्चर्य्य और शोक हुआ था, परन्तु अब तो यह दशा एक तमाशा और खेल बन गई थी। यह लोग दौड़ दौड़ कर अच्छे से अच्छा सामान कमरों में से निकाल कर लाते, तरह तरह की आवाज़ें निकालते और सब को अग्नि के सुपुर्द करते। जब बिछाने का सामान समाप्त हो गया, तो चित्रों उनके चमकते हुए चौखठों, आबनूसी और हाथी दांत के खिलौनों और मूर्तियों, सन्दूक़चियों और शृंगारदानों की नौबत आई।

कुछ बलवान मनुष्यों ने उपवनकी संगमरमर की मूर्त्तियों को उखाड़ना और हथौड़ों से तोड़ना आरम्भ किया, कुछ ने शीशे की चीज़ों पर पत्थर फेंकने शुरू किये और देखते देखते बीसियों झाड़ और फानूस और मूल्यवान दर्पण और चीनी के बरतन टुकड़े टुकड़े हो गये। इतने समय में अग्नि की लपटें ऊंची हो गई थीं और चिता से कई प्रकार की आवाजें निकलने लगी थीं। नौकर चाकर और मजदूर अपने गुलशोर से इस हंगामे को और भी बढ़ा रहे थे।

जब कि यह हंगामा बरपा था, सुन्दरी गेरुवा वस्त्र पहने सर के बाल खोले नंगे पाँव मकान के बाहर आई। यद्यपि इस समय वस्त्राभूषण और बनाव चुनाव के विचार से वह सिर से पैर तक सादगी की देवी हो रही थी, फिर भी उसका प्राकृतिक सौन्दर्य्य और लावण्य बनाव और शृंगार से सहस्र गुणा अधिक अच्छा था। वह निकली, तो अपने नाश और तबाही का तमाशा देख कर एक क्षण के लिये व्याकुल हुई, परन्तु उसने अपने को सम्हाला और साधू के पास जाकर उसको हाथी दांत की एक अत्यन्त सुन्दर मूर्त्ति, जो बड़ी कारीगरी और सफ़ाई से काटी गई थी, उसने दिखलाई और बोली—

सुन्दरी—"स्वामी जी महाराज, क्या इसको भी लपटों के सुपुर्द कीजिएगा? इस पर बड़ा परिश्रम और कारीगरी व्यय की गई हैं। यह मूर्ति इतनी मूल्यवान है कि यदि इसको इसके सौ गुने सोने से भी तौलिये तो इसका मूल्य पूरा नहीं हो सकता। अब कठिनता से कोई कारीगर ऐसी मूर्त्ति गढ़ सकता है। स्वामी, इस बात को भी ध्यान में लाना कि यह प्रेम के देवता की मूर्ति है। इस कारण भी इसके साथ जियादती न होनी चाहिये। विश्वास मानो कि प्रेम मनुष्य का आभूषण है। यदि मैं पापिष्ठा बनी, तो प्रेम की मतवाली होकर नहीं, किन्तु प्रेम को हृदय से निकाल कर और पैरों के नीचे कुचल कर। मैंने प्रेम से वाध्य होकर जब कभी जो कुछ भी किया मुझे एक क्षण के लिए भी लज्जा नहीं आई। यदि आज मैं अपने पापों से तौबा करती हूं और उन पर लज्जित हूं, तो इसलिये कि मैंने प्रेम और प्रीति का अपमान किया। जिस स्त्री के हृदय में प्रेम ने घर कर लिया, वह सिवाय उसके कि जिस पर वह मोहित है, दूसरे का मुख देखना पसन्द नहीं करती। इसलिए प्रेम और

प्रेम के देवता का हम सब को आदर करना चाहिए। रामानन्द, देखो तो यह मूर्ति कितनी सुन्दर है। एक दिन महेन्द्र ने जो उस ज़माने में मुझे बहुत प्यार करता था, यह मूर्ति यह कह कर मेरी भेंट की थी कि "यह मेरी निशानी है, इस से मेरी याद क़ायम रहेगी।" परन्तु इस नटखट ने महेन्द्र की याद तो एक दिन भी न दिलाई, अलबत्ता इसे देख देख कर मुझे जसवन्त बहुत याद आया किया। स्वामी महाराज, इस चिता में हज़ारों नहीं, लाखों का धन दौलत फूंक दिया गया, परन्तु मेरी प्रार्थना है कि इस मूर्त्ति को तुम बचा लो और किसी शिवालय में इसे रख दो कि जहाँ लोग इसकी पूजा कर सकें। जो इसको देखेंगे और पूजेंगे उनके दिल में ईश्वर की भक्ति उत्पन्न होगी, क्योंकि प्रेम से हो सच्ची भक्ति उत्पन्न होती है।"

सुन्दरी समझी थी कि उसने इस मूर्ति को बचा लिया कि इतने में रामानन्द ने झपट कर यह मूर्ति सुन्दरी के हाथ से छीन ली और उसको जलती हुई आग में फेंक दिया और क्रोध में आ कर कहने लगे—"क्या यह पर्य्याप्त नहीं है कि महेन्द्र ने इस मूर्ति को हाथ लगाया है। अब तो यह विषमय और अपवित्र हो गई।"

मूर्ति को आग में फेंक कर रामानन्द ने और चीज़ों पर हाथ साफ़ करना आरम्भ किया। सुन्दरी के स्वर्णाभूषण, कपड़े, जाकटें और ब्लाउज़ें, कारचोबी काम के जूते, सुनहरी जड़ाऊ और सुनहरे ज़ेवर एक एक करके उन्होंने उठाये और उस सुलगती हुई भट्टी में डाल दिये। उस समय उनके क्रोध की यह दशा थी कि जैसे उसके सिर पर कोई जिन सवार हो गया हो, रामानन्द एक एक चीज़ अग्नि के सुपुर्द करते थे और

नौकर-चाकर मतवाले होकर तरह तरह की आवाजें निकालते और हंगामा बरपा करते थे।

जब बहुत शोर गुल होने लगा और आग की तपिश और धुएं ने हवा में गरमी उत्पन्न की, तो सुन्दरी के पड़ोसी एक एक करके उठे और अपनी खिड़कियां खोल कर देखने लगे कि क्या कोलाहल हो रहा है और धुवाँ कहाँ से आ रहा है। यह दशा देख कर हर एक जैसा बैठा था वैसा ही अपने घर से निकल कर वहाँ आखड़ा हुआ। हर एक आश्चर्य में था कि यह हुआ क्या। उनमें से कुछ सौदागर भी थे जिनसे सुन्दरी वस्त्र और इतर आदि मोल लिया करती थी। उनमें कुछ रंगीले रसिया थे, जो रात्रि कहीं बिता कर प्रातः काल घर जा रहे थे। यह भी खड़े हो कर तमाशा देखने लगे। धीरे धीरे इस स्थान पर एक जन समूह एकत्रित हो गया और यह रहस्य प्रकट हो गया कि स्वामी रामानन्द ने सुन्दरी को इस पर आमादा किया है कि वह अपने धन दौलत पर लात मार कर योगिन हो जाय।

जो लोग आग लगने और हो-हल्ला होने के कारण उस जगह इकट्ठा हो गये थे, उनमें बहुतेरे ऐसे थे, जो सुन्दरी की ऐशो-इशरत और उसकी शान शौकत और रसिकता से वाकिफ़ थे। वे लोग सुन्दरी की इस काया-पलट को देख कर आश्चर्य करते रहे थे, पर असली बात क्या थी, यह उनकी समझ में नहीं आया था। जितने आदमी, उतनी ही तरह की बातें सुनाई देती थीं। सुन्दरी के योगिन हो जाने से हर मनुष्य कुछ न कुछ उदास और व्याकुल था। नगर के सैकडों लंगड़े-लूले, अन्धे-अपाहिज भी एकत्रित हो गये थे। वे बिलख बिलख कर रोते और कहते थे कि हर प्रातःकाल इस द्वार से दो सौ दरिद्रियों को रोटी मिलती थी, अब यह द्वार बन्द हो गया तो हमारा पेट कैसे भरेगा ?

इस समूह में एक मनुष्य चुपचाप खड़ा कुछ सोच रहा था। यह जगमल एन्ड सन्स की दूकान के मालिक लाला बद्रीदास, थे और इनके यहां से हर महीने कई हज़ार रुपये का माल और सामान सुन्दरी के यहां जाता था। सुन्दरी उनकी कई सहस्र की देनदार थी। बहुत ध्यान के बाद वे छोटे मियां के शाने पर हाथ रख कर कहने लगे—" क्या इस बैरागी को यह सोने की चिड़िया उड़ा ले जाने दोगे ? "

छोटे मियां हटो—बचो कहते भीड़ चीरते हुए सुन्दरी के पास पहुँचे। छोटे मियां सुन्दरी को समझा ही रहे थे कि रामानन्द ने झपट कर छोटे मियां की गरदन नापी और डपट कर कहा—" दूर हो दुष्ट यहां से। वह अब ईश्वर की दासी और भक्त है। तू अपने अपवित्र हाथ अब उसको नहीं लगा सकता। "

छोटे मियां—" रफ़ा हो, लंगूर यहां से, नहीं तो तेरी दाढ़ी नोच कर फेंक दूंगा। मुझे अपनी प्रेयसी से बात करने दे। यदि अधिक चूँचख़ करेगा, तो इसी भट्टी में उठा कर फेंक दूंगा। "

यह कर छोटे मियां ने सुन्दरी का हाथ पकड़ा ही था कि रामानन्द ने उनको इस जोर का धक्का दिया कि यह चारों शाने चित्त धरती पर जा गिरे। इधर बद्रीदास ने दस पांच लफंगे लुंगाड़ों को साधू के विरोध में भड़का दिया। छोटे मियां भी गर्द झाड़ कर खड़े हो गये और लगे साधू को गालियां देने और लोगों को आमादा करने कि बैरागी की ख़बर लो। चुनाचि बीस तीस आदमियों का एक जत्था बन गया था और स्वामी जी उनके चक्कर में आकर घिर गये थे।

जब स्वामी जी ने यह हंगामा बरपा होते देखा तो सब से पहले उन्होंने सुन्दरी को सुरक्षित किया और फिर गरजते हुए कहने लगे—" ख़बरदार, कमबख़्त जो तुम ने इस देवी को हाथ

लगाया। यदि तुम सीधी राह पर नहीं आये तो सब के सब नरक लोक में जाकर अपने किये का दंड भोगोगे।"

उनकी वक्तृता उस समूह में गूँज गई। परन्तु बदरी दास अपनी शरारत से गाफ़िल न था। ईंटें और पत्थर उसने अपने दामन में भरे; कुछ दो चार लफंगों और बदमाशों को दिये। चारों ओर से पत्थरों की बौछार होने लगी। एक ढेला स्वामी रामानन्द के माथे पर जा कर लगा। उनकी भौं फट गई और ख़ून बहने लगा। सुन्दरी ख़ून देख कर सहम गई। इसी समय भीड़ को चीरता हुआ एक वज़ादार और शरीफ़ आदमी घटना स्थल पर पहुंचा और ज़ोर से कहने लगा—"ठहरो ! ठहरो ! क्या करते हो ?"

यह मनुष्य महेन्द्र था, जो अपने घर जा रहा था। जब उसकी आवाज़ का प्रभाव न हुआ, तो उसने दुबारा लोगों को समझाना आरम्भ किया परन्तु नक़्क़ारखाने में तूती की आवाज़ कौन सुनता है ? जब उसने देखा कि उसका प्रयत्न सफल नहीं होता, तो मजबूर हो कर चुप हो रहा। परन्तु तुरन्त ही उसको एक उपाय सूझा। उसने अपने जेब से कुछ रुपये निकाल कर मुट्ठी में भर कर खनखनाए और दो चार मुट्ठियां एक ओर फेंकी, तो कुछ भिखारी, कुछ गली के लौंडे, कुछ लफंगे उनके लेने के लिये झपटे और लोगों का ध्यान भी उस ओर बँट गया। उसने दो चार मुट्ठियां रेजकारी और पैसों को और फेंका। अब तो लोग उन पर टूट पड़े और भीड़ भी उसी ओर जाने लगी। महेन्द्र, स्वामी रामानन्द की ओर लपका। उसने इनको और सुन्दरी का हाथ पकड़ कर भीड़ में से निकाला। थोड़ी देर तक तीनों दौड़ते रहे। जब देखा कि लोग पीछा नहीं कर रहे हैं, तो उन्होंने दम लिया।

महेन्द्र ने किसी क़दर दुख और किसी क़दर व्यंग की वाणी में कहा—"वाह रे कृष्ण कन्हैया! ख़ूब बंसी बजाई; राधा घर छोड़ कर भागी। चलो कहानी का अन्त हुआ। अब तो सुन्दरी! तुम वहीं जावोगी, जहां रामानन्द तुम्हें ले जावेंगे।"

सुन्दरी—"हाँ, महेन्द्र! भोग विलास के जीवन से थक गई हूं। अब दिल ऊब गया है। मुझे तो अब ईश्वर से लगन लगाने की धुन समाई है।"

महेन्द्र—"प्यारी सुन्दरी! स्वामी जी तो एक ही प्रकार के सुख और आनन्द से परिचित हैं और मैंने दीन दुनिया के जितने सुख हैं सब की जांच की है और इस कारण स्वामी जी से अच्छा हूं।"

जब महेन्द्र सुन्दरी से यह बातें कर रहा था, स्वामी रामानन्द महेन्द्र की ओर काल स्वरूप होकर देख रहे थे। यह देख कर स्वामी की ओर महेन्द्र मुख़ातिब हुआ।

महेन्द्र—"रामानन्द! तुम क्रोधित न हो, न यह विचार करो कि मैं तुम्हारी बातों को सर्वथा निरर्थक समझता हूं।"

फिर सुन्दरी की ओर झुक कर महेन्द्र ने कहा—"सुन्दरी, अच्छा है, जाओ और अपने अरमान पूरे करो और यदि संसार त्याग कर और बैरागिन होकर तुमको और अधिक आनन्द प्राप्त हो सकता है, तो सुखी रहो। हमारी आशीस तुम्हारे साथ रहेगी।"

रामानन्द के क्रोध का पारा इतनी देर में बहुत चढ़ गया था। जब महेन्द्र चुप हुआ तो स्वामी जी बरस पड़े।

रामानन्द—"हे दुष्ट, मुझे तेरी सूरत देख कर घृणा आती है। चल, यहाँ से दूर हो और सीधा नरक में जा। तू पुराना पापी

है, तेरी तो नस नस में विष भरा हुआ है। तू मेरे सामने से अपना मुँह काला कर।"

महेन्द्र आश्चर्य से रामानन्द की ओर देखने लगा और बोला—"अच्छा भाई, विदा। तुम्हारा विश्वास और तुम्हारे प्रेम और घृणा का यह निधि तुमको सलामत रहे। सुन्दरी, विदा! तुम मुझको भुलाने का व्यर्थ प्रयत्न करोगी, पर मैं तुम को कभी दिल से न भुलाऊंगा।"

यह कह कर महेन्द्र ने तो अपनी राह ली और स्वामी जी सुन्दरी को साथ लिए नगरी के दरवाज़े से बाहर निकले और यमुना किनारे को राह चलने लगे।

स्वामी जी की गरमी का पारा अभी चढ़ा हुआ था। उन्होंने घृणा की दृष्टि सुन्दरी पर डाल कर उसे बहुत कुछ भला बुरा कहा।

सुन्दरी भीगी बिल्ली की तरह यह सब सुनती स्वामी के साथ चलती रही। चलते चलते उसके पांवों में छाले पड़ गये। धूप की तपिश से उसका सिर चकरा रहा था। परन्तु स्वामी जी को उसकी इस दशा पर तनिक भी दया न आई। जब उनको ध्यान आया कि इस दुर्भागिनी ने उस पापी महेन्द्र के साथ भोग विलास किया है, तो उनके शरीर में आग सी लग गई। वह सुन्दरी को लानत-मलामत करना चाहते थे, परन्तु उनका गला घुटने लगा। केवल दांत पीस कर रह गये और जोश से क़दम बढ़ा कर सुन्दरी के सामने आ खड़े हुए। स्वामी जी को इस दशा में देख कर सुन्दरी को भय हुआ। स्वामी कुछ बोले तो नहीं, परन्तु बहुत ज़ोर से सुन्दरी के मुँह पर थूक दिया। उसने बहुत शान्ति और धीरज से अपना मुख रूमाल से पोंछा और स्वामी जी के पीछे पीछे चली गई।

एकाएक उन्होंने सुन्दरी के पाँव में से ख़ून टपकते देखा। इस दृश्य ने उनकी दशा में परिवर्तन कर दिया। आँसू जारी हो गये, हिचकियाँ बँध गईं और चीख़ चीख़ कर रोने लगे। वे सुन्दरी के चरणों पर गिर उसके पाँवों को होंठों से चूसने लगे और हिचकियां लेते हुए बोले—"हे सुन्दरी, प्यारी सुन्दरी, तेरी आत्मा अवश्य पवित्र है, मैं तेरे चरण छूता हूं। स्वर्ग लोक के देवताओ! आकाश से उतरो। इस लहू की बून्द को सँभाल कर ले जाओ और ईश्वर के सम्मुख रख दो। ईश्वर करे कि यमुना तट पर यहीं सुन्दरी के लहू से सींचा हुआ कोई पुष्प खिले कि जिसके देखने मात्र से मनुष्य जाति के हृदय में निर्मलता और भक्ति उत्पन्न हो।"

सामने से एक किसान का लड़का टट्टुई पर सवार जाता दिखाई दिया। स्वामी जी ने लपक कर उसको ठहराया और उसे टट्टुई पर से उतार सुन्दरी को सवार कराया और लगाम पकड़ कर फिर राह चलने लगे। दो पहर के समय वह एक ग्राम के समीप पहुंचे। नदी के तट पर कुछ ताड़ के वृक्षों का एक समूह हो गया था। स्वामी जी और सुन्दरी ने वहीं दम लिया। कुछ रोटी और साग खाया और ठंडा जल पिया। थोड़ी देर दम ले कर यह दोनों फिर राह चलने लगे। प्रातःकाल वे एक स्थान पर पहुंचे। दूर एक बड़ा चौबारा और मन्दिर दिखाई पड़ा। उसके चारों ओर कुछ कुटियाँ बनी हुई थीं। सुन्दरी ने देखते ही पूछा—"स्वामी, क्या यहां बाई का स्थान है?" स्वामी जी ने कहा—"हाँ, अब हम स्थान पर आ पहुँचे।"

स्वामी जी सुन्दरी को साथ ले कर बाई के पास गये। सुन्दरी की सारी कहानी वर्णन की और इस बात की इच्छा प्रकट की कि और योगिनिओं और वैरागिनियों के साथ सुन्दरी को भी

रक्खा जावे। परन्तु थोड़े दिन तक इसको एक अलग कोठरी में बन्द करने की आवश्यकता है। स्वामी जी ने सुन्दरी को एक कोठरी में जहां एक खाट पड़ी थी, पानी का एक मटका रक्खा था और दो चार आवश्यक चीजें और थीं, लेजा कर स्वयं बन्द कर दिया और ताले पर अपने हाथ से मुहर लगा वहां से चल खड़े हुए।

(५) अहंकार का सिर नीचा

साधुवों और फ़कीरों में कुछ ऐसी तारबरक़ी फैली हुई है कि एक दूसरे का कुशल ठीक ठीक बहुत शीघ्र मालूम हो जाता है। स्वामी रामानन्द के हृषिकेश पहुंचने के पहले सुन्दरी के घर-बार त्याग करने और स्वामी के कहने से योगिन होकर बाई के स्थान पहुँचने की सूचना आ चुकी थी। स्वामी जी के हृषिकेश पहुँचने पर उनके चेलों ने दूर ही से उनका स्वागत किया और ईश्वर के भजन और स्वामी के गुण गाते उनको खुशी खुशी कुटी में लाए। किसी ने चरण लिये, किसी ने दंडवत की, किसी ने फूल चढ़ाए, कोई आरती उतारने लगा। केवल ऊधो भक्त इनको देख कर अचम्भे से कहने लगा कि यह मनुष्य कौन है। परन्तु इनको सौदाई समझ कर किसी ने इनकी बात पर ध्यान न दिया। जब स्वामी रामानन्द अकेले द्वार बंद करके अपनी कुटी में बैठे और ज्ञान ध्यान को चिन्ता करने लगे तो उनको ख़याल आया कि निदान मैं अपनी राम कोठरी में पहुँच गया, अब निश्चिन्त होकर ज्ञान ध्यान करूंगा, पर यह क्या बात है कि यह कुटी और वह वस्तुएं जो मुझको प्रिय थीं, अनोखी सी मालूम होती हैं। इस कुटी में तो कुछ बदला नहीं है। मेरा बिछौना जहां और जैसा बिछा था वहीं और वैसा ही बिछा हुआ है। पानी का घड़ा भी अपने ठिकाने रक्खा हुआ है। मेरी भागवत पुराण और राम नाम के भोज-पत्र भी जैसे के तैसे रक्खे हैं। किसी चीज़ में कोई फरक नहीं आया है, परन्तु मुझे यह सब चीज़ें अनोखी और बड़ी तुच्छ सी मालूम होती हैं। यह क्या बात है। अगर यह चीज़ें

नहीं बदलीं तो क्या मैं ही बदल गया हूँ ? यह सब सामग्री तो किसी मृत्पुरुष की प्रतीत होती है। हे ईश्वर यह क्या बात है ? क्या तूने मुझ से कुछ छीन लिया ? अब मेरे पास क्या रह गया ? मैं क्या हूं कौन हूं ? कुछ समझ में नहीं आता। यह सोच कर रामानन्द ने माथा टेका और ईश्वर की प्रार्थना करने लगे तो कुछ ढाढ़स बँधी। अभी वह ईश्वर ध्यान ही में थे कि सुन्दरी का चित्र उनकी आंखों तले फिर गया। स्वामी जी प्रसन्न होकर और ईश्वर को धन्यवाद दे कर बोले, " हे ईश्वर तू अपने भक्तों से बड़ा प्रेम करता है। तूने ही सुन्दरी को मेरे पास भेजा है चूंकि मैंने ही सुन्दरी को तेरी शरण भेज कर तेरी दासी बनाया है तो तू चाहता है कि उसका चित्र मुझे दिखा कर खुश करे और मेरी ढाढ़स बांधे। तू मुझे दिखाता है कि सुन्दरी का मुख अब कैसा भोला मालूम होता है। उसकी चाल-ढाल कैसो शरमीली हो गई है और उसका सुन्दर रूप देवियों से कितना मिलने-जुलने लगा है।

"चूंकि मैंने ही सुन्दरी की यह काया-पलट की है और उसको तेरी दासी बनाया है इस लिये तू उसका चित्र मुझको दिखा कर प्रसन्न करना चाहता है। इस कारण मैं उस स्त्री को बड़ी खुशी से देखता और उसका ध्यान करता हूं। मुझे इसकी खुशी है कि तुझको इस बात का ख्याल है कि सुन्दरी को मैंने ही तेरी शरण भेजा और उसको तेरी दासी बनाया है। यदि तू इस बात से प्रसन्न है तो अपनी सेवा करा और अपने पास रख परन्तु किसी और दूसरे को कदापि सुन्दरी को हाथ न लगाने देना, मैंने सुन्दरी केवल तेरी ही सेवा के लिये दी है और किसी लिये नहीं।"

इन्हीं बातों और सुन्दरी के ध्यान में स्वामी जी को रात भर नींद नहीं आई और सुन्दरी का चित्र पहले से भी अधिक स्पष्ट

रात भर उनकी आंखों तले फ़िरा किया और स्वामी जी बार बार यही कहा किये—"ईश्वर, मैंने जो कुछ किया केवल तेरी सेवा करने के लिये।" परन्तु यह किसी क़दर अनोखी बात थी कि स्वामी जी की बेचैनी कम न हुई और उनका ध्यान बराबर भटकता रहा। वह बार बार आपही आप कहते थे—"हे मन, तू धीरज क्यों नहीं धरता। तू भटकता क्यों फिरता है? मेरे भाव में पहली सी शान्ति क्यों नहीं आती?"

एक महीने तक स्वामी जी इसी उधेड़बुन और बेचैनी की दशा में रहे। सुन्दरी का चित्र फिर फिर कर उनकी आंखों तले फिरता और उनका ध्यान बराबर उसी ओर लगा रहता। चूंकि वह विश्वास करते थे कि ईश्वर ही यह चित्र उनको दिखलाता है तो वह उसको ध्यान से हटाने और आंखों से दूर करने की भी चिन्ता न करते थे। दिन को जागने की दशा में तो सुन्दरी का ध्यान उनको लगा ही रहता था। एक दिन रात को भी सुन्दरी स्वप्न में उनको दिखलाई दी और इस सूरत में कि उसके जूड़े में फूल बंधे हुए थे। उसके नेत्र प्रेम के मद से झुके जाते थे, उसकी मद-भरी चाल और मन को मोहने वाले भाव देख कर दिल को क़ाबू में रखना कठिन था। स्वामी जी यह दशा देख कर घबरा उठे और उठ कर बिछौने पर बैठ गये। उनके माथे से पसीना टपकने लगा और होंठों पर इस प्रकार की नमी मालूम हुई कि जैसे कोई मुँह से मुँह मिला कर ज़ोर ज़ोर से सांस ले रहा है। स्वामी जी ने आँखें खोल कर ध्यान जो किया तो क्या देखते हैं कि एक सियार अपने दोनों पंजे उनके बिस्तर पर जमाये खड़ा हुआ ज़ोर ज़ोर से सांस ले रहा है। उसकी सांस में दुर्गन्धि है और ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह उनको मुँह चिढ़ाता है। यह देखते ही रामानन्द के पैरों तले से मट्टी निकल गई और वह चित्र

लिखित से रह गये ? कि हे ईश्वर यह बात क्या है ? थोड़ी देर के लिये तो उनका दिमाग़ बेकार हो गया। जब कुछ तबियत सावधान हुई और वह विचार करने लगे तो उनका आश्चर्य और भी बढ़ने लगा। वह सोचने लगे कि दो बातें हो सकती हैं—या तो स्वप्न और यह सूरतें जो मुझको दिखाई देती हैं पहले की तरह ईश्वर की भेजी हुई हैं और यह केवल मेरी प्राकृतिक मूर्खता है जो मुझको उनके ठीक ठीक माने समझने से दूर रखती है और या यह है कि यह स्वप्न और सूरतें ईश्वर की भेजी हुई नहीं किन्तु पलीद रूहों के प्रभाव से मुझे दिखाई देती हैं। पहले भी ऐसा ही हुआ होगा और अब भी वही हुआ, बहरहाल यह अवश्य है कि साधू को जो इन भेदों को समझने का ज्ञान होना चाहिये वह मुझ में अब नहीं रहा और ईश्वर ने मेरा साथ छोड़ दिया। परिणाम तो यही निकलता है। यद्यपि इसका कारण समझ में नहीं आता। यह सोचते सोचते उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की,—"हे ईश्वर यह क्या बात है कि तेरे भक्तों और संतों की सूरतें और चित्र भी अब साधू के लिये धोखा-धड़ी हो गईं। तू अपने दास को किस किस तरह से परखा चाहता है। हे ईश्वर मुझको ऐसा ज्ञान दे जो मैं खोटे खरे को परख सकूं। परन्तु ईश्वर ने जिनकी बातें समझ में नहीं आतीं अपने दास को बुद्धि देना उचित न समझा और विचारे रामानन्द सन्देह और शंका की गुंजलक में पड़े दिमाग़ की धज्जियां उड़ाते रहे। निदान उन्होंने यह निश्चय किया कि अब वह सुन्दरी के ख़याल को अपने दिल से बिलकुल दूर कर देंगे परन्तु उसका कहना आसान था करना मुशकिल था। सुन्दरी ने उनका ऐसा पीछा पकड़ा था कि उनको छोड़ने का नाम न लेती थी। यद्यपि वह उनसे कोसों दूर थी परन्तु उन्हें यह प्रतीत होता था कि वह उनके बग़ल में हैं। सोते-जागते, खाते-

पीते यहां तक कि जिस समय वह पूजा-पाठ में होते थे उस समय भी सुन्दरी का ध्यान उन्हें सताता रहता था। वह लाख चाहते थे कि इस विचार को दूर करें परन्तु कुछ बन न पड़ता था। कभी तो वह सौन्दर्य्य और यौवन का चित्र बनी हुई भड़कीले कपड़े पहने अनेक हाव-भाव से उनके सामने आती और अपनी दिल लुभाने वाली छटा से उनका मन चुराती। कभी योगिन के भेस में बाल खोल, प्रेम व प्यार के मद में डूबी हुई एक मद भरी अदा से उनकी आंखों में फिर जाती। कभी लज्जा की ऐसी मूर्ति बन जाती कि जैसी वह जंगल में उनके साथ थी और उसके ज़ख़मी पांव से खून टपक रहा था। कभी वह उसको बड़े कष्ट में और अपने पापों के धोने के लिये ईश्वर-प्रार्थना में लिप्त देखते। ग़रज कि सुन्दरी रामानन्द को अनेक दशाओं में दिखाई देती और उससे उन्हें एक क्षण के लिये भी छुट्टी न मिलती। सब से अधिक आश्चर्य्य उनको इस पर हुआ कि जिस सुख और विलास की सामग्री उन्होंने अपने हाथों फूंक कर भस्म कर दिया था सुन्दरी उन्हीं से सज धज कर उनके सामने आती और उनको तरह तरह से लुभाती और वह हाथ से हाथ मल कर कहते,—"क्या अंधेर है कि सुन्दरी के कर्म और पाप मेरे पीछे हाथ धो कर पड़े हैं"। इन विचारों और दशा से उनकी आत्मा को दुख पहुँचता और वह इस दशा में बेचैन हो जाते परन्तु अब तक इन बातों के होते हुए भी उनका तन-मन साफ़ रहा था। वह ईश्वर पर विश्वास रख कर यों प्रार्थना करते और गिड़गिड़ाते—"हे ईश्वर यदि मैं सुन्दरी की खोज में गया तो केवल तेरी सेवा के विचार से; किसी अपने प्रयोजन से नहीं। तो क्या यह धर्म लगती बात है कि जो कुछ मैं ने तेरी खातिर किया तू उस के लिये मुझे दंड दे। हे ईश्वर, मेरी सहायता कर और मुझ पर अपनी कृपा कर। मैंने

अपनी इन्द्रियों को अपने बस में कर लिया तो अब मुझे इन सूरतों और चित्रों से बेबस क्यों करना चाहता है। जब मैं अपने तन को बस में कर चुका तो मेरे मन को क्यों डांवाडोल करता है। मैं समझता हूं कि स्वप्न का जीवन जागृति के जीवन से भी अधिक बलवान होता है और मुझ पर बड़ा कठिन समय पड़ रहा है। इसलिये मैं तेरी शरण आया हूं कि मेरी सहायता कर।"

रामानन्द की अजब दशा थी। वह न केवल ईश्वर से प्रार्थना और विनय करते थे परन्तु दलील व बहस भी पेश करते थे। ईश्वर न उनकी दलीलों का उत्तर देते थे, न उनके गिड़गिड़ाने पर तरस खाते थे।

एक दिन प्रातःकाल जब वह उठे तो उनकी अजीब दशा थी। होंठों पर ठंडी सांस और आँखों में आँसू डबडबाए हुए, दिल धड़क रहा था और वह अपनी ज़ात पर लानत भेज रहे थे। रात को उन्होंने सुन्दरी को स्वप्न में देखा था। सुन्दरी के सौन्दर्य्य और भाव की वही हालत थी जो उन्होंने थियेटर में मेनका को योगिन के भेस में देखी थी। सुन्दरी को इस रूप में देख कर रामानन्द की आँखें चौंधिया गईं। वह आश्चर्य्य में अभी उसकी तरफ़ देख ही रहे थे कि सुन्दरी उनके पास बिछौने में आ गई और बाहें उसने उनके गले में डाल दीं। जब उनकी आँख खुली तो तौबा तौबा करते बिस्तर पर से उठे। उस समय उनकी लज्जा और निराशा की यह दशा थी कि वह अपना मुंह किसी को दिखाना न चाहते थे। रौशनी से भी मुंह चुराते। मुख को उन्होंने अपने हाथों से छिपा लिया था। बिछौने की ओर देखने से उनको लज्जा आती थी। वहां बैठ कर ईश्वर का नाम लेने में भी भय मालूम होता था। अपना तन, मन और कुटी की सब चीजें उनको पापमय मालूम होती थीं। बहुत समय के उपरान्त उन्हें मालूम हुआ कि

आज वह कुटी में अकेले थे और ईश्वर की कृपा से अब सुन्दरी से पीछा छूटा था। यद्यपि वह इसको ग़नीमत समझते थे, पर अपना अकेलापन भी उनको भाता न था। कुटी भयानक मालूम होती थी। उनको भय था कि कुटी के पापमय हो जाने से पलीद रूहें उस पर अपना राज्य स्थापित करके उनको सतायेंगीं। यह भय अकारण न था। वही सात गीदड़ जो कुटी के चारों ओर फिरा करते थे, परन्तु कुटी में घुसने का साहस न रखते थे, आज बिला खटके अंदर चले आये और उनके बिस्तर पर आकर बैठ गए। संध्या समय एक आठवां गीदड़ और आया जिसके शरीर से बड़ी दुर्गन्धि आती थी। वह उनको मार कर निकाल देते थे परन्तु वह और अधिक संख्या में कुटी पर क़ब्ज़ा जमाए बैठे नज़र आते थे। धीरे धीरे यह हालत हुई कि जब कभी वह दृष्टि उठा कर कुटी के चारों ओर देखते तो उनको गीदड़ ही गीदड़ तमाम कुटी में नज़र आते और मालूम होता कि वह बहुत क्रोध से उनको देख रहे हैं। स्वप्न में जो पाप उससे हुआ था उसका प्रायश्चित करते और बुरे विचारों से अपना पिंड छुड़ाने के लिये रामानन्द ने सोचा कि यह कुटी सरासर पापमय होगई है। इसको छोड़ देना चाहिये और जंगल में जाकर ऐसा योग और तप करना चाहिये कि जिससे तन और मन फिर से शुद्ध और पवित्र हो जाएं। इस विचार पर अमल करने से पहले उसने सोचा कि चल कर भक्त ईश्वरदास से भी परामर्श करना चाहिये। इसलिये रामानन्द उनकी कुटी पर पहुँचे तो देखा भक्त जी तरकारियों के कैरियों में पानी दे रहे हैं और एक कबूतर बड़े इतमीनान से उनके कंधों पर बैठा इधर उधर देख रहा है। स्वामी रामानन्द को देखते ही भक्त ईश्वरदास बोले—" जै राम जी की स्वामी जी, आज कैसे दर्शन दिये। देखिये ईश्वर कैसा दयालु है

कि अपने जीव जन्तु हमारे पास भेजता है और हम उनसे अपना दिल बहलाते हैं। देखो इस कबूतर के रंग कैसे प्यारे प्यारे हैं। पर आप तो ईश्वर चर्चा करने को पधारे होंगे। मैं इस बरतन को हाथ से रख दूं तो आपकी बात सुनूं।"

रामानन्द ने भक्त ईश्वरदास से सब आत्म-कहानी सुनाई कि वह किस प्रकार देहली पहुँचे। सुन्दरी को त्याग का मार्ग दिखा कर उसे कैसे बाई के स्थान पहुँचाया और अब उनके दिल व दिमाग़ की क्या दशा थी। भक्त जी ने सब हाल सुन कर स्वामी जी को यह परामर्श दिया—

भक्त जी—"भाई, मैं तो पापी मनुष्य हूं और अपनी कुटी में बैठ कर पक्षियों, कबूतरों और मृगों से अपना मन बहलाता हूं। मुझको मनुष्य की बातों और दुनिया-संसार का हाल बहुत कम मालूम है। पर मुझे ऐसा समझ में आता है कि तुम्हारे दुख का कारण यह है कि तुम जग-संसार की धूम-धाम और गुल-गपाड़े से निकलते ही एक दम अपनी सुनसान कुटी में पहुँच कर शान्ति ढूढ़ने लगे। एक दम गरमी से निकल कर ठंड में जाना मनुष्य को रोगी बना देता है। खांसी और बुखार आ जाता है। यदि मैं तुम्हारे स्थान में होता तो एक दम जंगल की राह न पकड़ता किन्तु ऐसी बातों से अपना मन बहलाता जो साधू के लिये उचित हैं। हरिद्वार, हृषिकेश और कनखल के आस-पास बहुत से साधुओं, वैरागियों और सन्तों के स्थान हैं; कुटियें और अखाड़े हैं। उनमें नाना प्रकार के साधू और वैरागी रहते हैं और उनके जीवन व्यतीत करने के मार्ग भी अलग अलग हैं। उनको जाकर देखो और ध्यान में लाओ। मैं तो हाथ पैर से काम करने का आदी हूं। तुम पढ़े-लिखे हो; भागवत पुराण पढ़ा करो। अपने गुरू के वचन लिखकर पुस्तक तैय्यार

करो और राम नाम की गोलियां बना कर कछुओं और मछलियों को डालो। इस प्रकार जब काम में ध्यान लगेगा तो थोड़े दिनों में मन स्थिर होगा और शान्ति प्राप्त होगी। बाक़ी एक दम से तप करने और भूखा मरने से बहुत लाभ नहीं होने का। जब हमारे गुरू संत साँईदास हम लोगों को उपदेश दिया करते थे तो कहते थे कि आये दिन निर्जल व्रत रखना मनुष्य को दुर्बल कर देता है और दुर्बल हो जाने से मनुष्य आलसी हो जाता है। कुछ साधू और वैरागी आए दिन निर्जल व्रत रख अपने तईं किसी काम का नहीं रखते और दुर्बल होकर फिर काम क्रोध लोभ मोह से लड़ाई लड़ना और उन पर विजय पाना उनके बस की बात नहीं रहती। मैं तो सर्वथा मूर्ख हूं परन्तु जो गुरू सांईदास उपदेश दिया करते थे वह मेरे ध्यान में रह गए, वही मैंने आपको सुना दिये।"

रामानन्द ने इस परामर्श का धन्यवाद दिया और वचन दिया कि वह इस पर ध्यान देंगे। यह कह कर वहां से चल दिये और अपनी कुटी पर वापस आए। कुटी में घुसते ही उन्हें मालूम हुआ कि मानो सब कुटी छोटे छोटे गीदड़ों से भरी पड़ी है और उन्होंने कुटी को अपवित्र कर दिया है। रात को रामानन्द पड़ कर सो रहे परन्तु नींद में भी बेचैनी बहुत थी। स्वप्न में क्या देखा कि एक मैदान में पहुँचे जहां पुरानी इमारतों के खँडहर पड़े हुए थे। उन्हीं खँडहरों में उनको एक बड़ा मीनार दिखाई दिया जिसके बुर्ज का आकार एक औरत का सा था। यह उसको खड़े देख रहे थे कि एक आवाज़ आई 'इस मीनार पर चढ़ जा।' यह सुनते ही उनकी आंख खुल गई और उन्हें यक़ीन हो गया कि यह ईश्वर की आकाशवाणी है। उन्होंने अपने चेलों को एकत्रित किया और उनसे कहा—"हे मेरे सन्तो, मैं अब तुम

को छोड़ कर जहां ईश्वर भेजता है जाता हूं; तुम सब कृष्णाचार्य्य की आज्ञानुसार काम किया करना और बिचारे ऊधो भक्त का ध्यान रखना। ईश्वर तुम पर दया रक्खेगा।" यह कह कर स्वामी जी चल खड़े हुए। स्वामी जी अपनी धुन में मस्त दिन व रात राह चलते जंगलों की धूल फांकते, नदी और नाले पार करते कई दिनों के अनन्तर तुग़लक़ाबाद के खँडहरों में जा निकले तो इनको वह दृश्य दिखाई दिया जो उन्होंने स्वप्न में देखा था। एक ओर टूटा-फूटा बड़ा पुराना क़िला दिखाई दिया। कहीं महलों की दीवारें गिरती हुई दिखाई दीं। इधर उधर टूटी फूटी मसजिदें थीं। क़बरों के निशान अनगिनती थे। मक़बरे और उनके गुम्बद भी इस स्थान की प्राचीन प्रभुता का पता दे रहे थे। स्वामी जी इस दृश्य को ध्यान पूर्वक देखते चले जाते थे कि उनको वह मीनार भी दिखाई पड़ा जो उन्होंने स्वप्न में देखा था। स्वामी जी इस मंज़िल का पता चला कर बहुत प्रसन्न हुए और सोचने लगे कि किसी तरह इसकी चोटी पर पहुंचना चाहिये परन्तु मीनार बहुत ऊँचा था। समीप एक गाँव में जाकर स्वामी जी ने एक बहुत बड़ी सीढ़ी बनवाई और उसके ज़रिये से मीनार की चोटी पर पहुंचे और वहां आराम करने की फ़िक्र की परन्तु मीनार की चोटी की चौड़ाई इतनी न थी कि स्वामी जी बआराम उस पर लेट सकते। इस कारण पाँव समेट कर और गर्दन सीने पर झुका कर स्वामी जी ने वहां डेरा जमाया। बढ़ई जिसने सीढ़ी बनाई थी ईश्वर का भक्त था। उसने सोचा कि यदि स्वामी जी ने करवट ली और नीचे आ रहे तो यह ख़ून व्यर्थ ही उसकी गर्दन पर होगा। उसने दो ही तीन दिन में मीनार की चोटी पर एक कारीगर की सहायता से एक चबूतरा बनवा दिया और कटहरा लगा दिया, ताकि स्वामी जी के गिरने का भय न रहे।

गांव वालों में से एक सुशीला स्त्री ने धर्म का काम समझ कर स्वामी जी को रोज़ साग रोटी पहुंचाना आरम्भ कर दिया। स्वामी जी दिन की धूप और रात की ओस खाते और चौबीसों घंटे उसी मीनार पर लेटे रहते।

जब स्वामी जी के इस परिश्रम का समाचार निकट के ग्रामों में पहुँचा, तो लोग बड़ी श्रद्धा से उनके दर्शन करने आने लगे। धीरे धीरे वहाँ रामनगर नाम का एक ख़ासा गाँव बस गया और ज़रूरत की सब चीज़ें वहाँ मिलने लगीं। छै मास के अन्दर रामनगर की प्रसिद्धि और स्वामी रामानन्द की चर्चा न केवल पंजाब और संयुक्त-प्रान्त में ही फैली किन्तु जो यात्री बंगाल और दक्षिण से हरिद्वार और थानेश्वर आते थे, वे भी बिना रामनगर आए और स्वामी जी के दर्शन किये वापस न जाते थे। स्वामी जी के शिष्य भी वहीं आ पहुँचे और स्वामी जी की आज्ञा से मीनार तले उन्होंने भी अपनी झोपड़ियाँ बनालीं। और भी साधुओं-वैरागियों ने उनका अनुकरण करके रामनगर में ही धूनी रमाई।

इतना सब होने पर भी सुन्दरी की इच्छा उनके दिल व दिमाग़ की शान्ति को बुरे प्रकार से उलट रही थी।

इसी साल हरिद्वार में कुम्भ था और भारतवर्ष की हर एक दिशा से कई लाख आदमी इस तीर्थ धाम पर आकर जमा हुए थे। इनमें से बहुत से लोग हरिद्वार से लौटते समय रामानन्द की प्रसिद्धि और धूम सुन कर रामानगर भी पहुंचते थे। रोज़ाना हज़ारों यात्री रामनगर आते थे। औरतों और बच्चों की बहुतायत थी। बाँझ औरतें सन्तान की इच्छा से स्वामी जी के पास जातीं और उनका आशीर्वाद चाहतीं। कोई अपने बच्चे को, जिसे सूखे का रोग था, गोद में लिये पहुँचती कि महाराज

अपना हाथ फेर दें। किसी को जलोदर का रोग था, वह इस कारण मरता-गिरता पहुँचा था कि स्वामी जी एक फूंक मार दें, तो उस का कल्याण हो जाय। बहुत से कोढ़ी और अन्धे भी इस विचार से भीड़ लगाए खड़े रहते कि कदाचित स्वामी जी दो छींटे अपने हाथ से डाल दें, तो अच्छे हो जावें। स्वामी जी ईश्वर का ध्यान कर और परमात्मा का नाम ले कर किसी के सर पर हाथ फेर देते, किसी की तसकीन फूँक से कर देते, किसी पर पानी के छींटे डाल देते और लोग खुश खुश चले जाते। कुछ को लाभ भी हुआ और उन्होंने स्वामी जी की शक्ति और चमत्कार की और भी धूम मचा दी।

स्वामी जी को इस मीनार पर जीवन व्यतीत करते कई मास व्यतीत हो गये थे। धूप की तपिश, वर्षा की नमी और शिशिर की शिद्दत ने उनके शरीर की खाल के साथ बड़ा ज़ुल्म किया था। उनके शरीर का रंग कहीं काला और कहीं लाल हो गया था। जिल्द के फट जाने से ज़ख्म हो गये थे। ऋतुवों की कठोरता सहन करते करते उनकी इन्द्रियों में सख़्ती और गति-हीनता उत्पन्न हो गई थी; यहां तक कि हाथ-पांव हिलाना भी कठिन हो गया था। परन्तु सुन्दरी की इच्छा और उसकी चाह इनको अब भी वैसी ही सताती थी कि जैसी पहले दिन।

इसी कुम्भ के ज़माने में श्री शंकराचार्य्य, स्वामी रामानन्द की प्रसिद्धि और महत्व के आकर्षण से रामनगर पहुँचे। उनके साथ बड़ा हुजूम था। उनके साथ बहुत से महन्त और पंडे भी स्वामी रामानन्द के दर्शनों को आये। रामनगर में श्री शंकराचार्य के आने से बड़ी धूम थ। श्री शंकराचार्य ने स्वयं बहुत आदर और सम्मान से स्वामी रामानन्द से बातचीत की और उनके महत्व के गुण गाये। स्वामी जी भी श्री शंकराचार्य्य के आने से और

हरिद्वार के महन्तों और वैरागियों के पधारने से प्रसन्न और सन्तुष्ट थे। उनको अपनी शक्ति और चमत्कार पर भी अहंकार था और अपनी प्रकृति व बल का उनको पूर्ण विश्वास हो गया था।

एक रात बहुत इत्मीनान से वह ध्यान में लिप्त थे कि कानों में आवाज़ आई—'रामानन्द, ईश्वर ने तेरे तप और पूजा से प्रसन्न होकर तुझको नाम और प्रसिद्धि दान की है। हज़ारों और लाखों में तुझको चुन करके बल और चमत्कार दिखलाने का ज़रिया नियत किया है।' रामानन्द ने कहा,—'जो ईश्वर की इच्छा होगी, वही होगा।'

रामानन्द के कान में फिर किसी ने कहा—"तो अब देखता क्या है? उठ खड़ा हो और अपने बल और चमत्कार से संसार के चारों कोनों में आत्मिक-शिक्षा दे। विश्वास और धर्म का प्रकाश फैला। चारों ओर देश में सनातन-धर्म के झंडे गाड़ दे फिर रईस और राजा और बड़े बड़े चक्रवर्ती महाराज तेरे चरणों की रज माथे पर लगायेंगे। बस, उठ खड़ा हो और अपने बल और चमत्कार का जादू संसार पर चला।"

रामानन्द यह सुनकर बोले,—"यदि ईश्वर की यही इच्छा है तो यह भी होकर रहेगा।" रामानन्द ने उठने और मीनार पर से उतरने का विचार किया। इसी समय आकाश-वाणी ने रामानन्द के विचार से परिचित होकर कहा—"रामानन्द, तू साधारण मनुष्य नहीं है, तू अपने योग बल से उड़ सकता है। देखता क्या है? छलाँग मार, देवता तुझको हाथों-हाथ सहारा देंगे।"

रामानन्द बोले—"यदि ईश्वर की यही इच्छा है, तो ऐसा ही होगा।"

अपने दोनों हाथ रामानन्द ने वायु में फैला कर क़दम उठाने का विचार किया ही था कि उनके कानों में बड़े ज़ोर से घृणा

भरो क़हक़हे की आवाज़ आई जैसे कोई किसी को मुँह चिढ़ाता है। इस आवाज़ को सुनकर वह दंग और भयभीत हो गये और बोले—" कौन हँसता और मुँह चिढ़ाता है ?"

आकाशवाणी—" अहा ! हा ! अभी क्या है ? यह तो तुम्हारी हमारी मित्रता और दोस्ती का आरम्भ है। धीरे धीरे तुम मुझे अच्छी तरह पहिचानने लगोगे। मेरे भोले साधू ! यह मेरी ही कारस्तानी है कि मैंने तुझ में इस मीनार पर चढ़ने और तमाशा करने की इच्छा उत्पन्न की थी और देख तो किस तरह से तुझसे कठपुतली का नाच नचा रहा हूँ। मैं तेरी भक्ति और प्रेम से प्रसन्न हूँ।"

स्वामी रामानन्द भय के मारे सहम गये और मुशकिल से उनके मुँह से आवाज़ निकली—" ओ पिशाच ! अब मैं तुझे पहिचान गया। तू ही तो सन्त और साधूओं के योग और तप को भंग और खंडित करता है।"

यह कह कर स्वामी जी सर को हाथों से पकड़ कर जहाँ खड़े थे, वहीं बैठ गये और स्वयं यह सोचने लगे कि यह मुझसे क्या हुआ कि मैंने इन कमबख़्त भूत-पिशाचों को पहिचाना नहीं और उनके कहने में आकर अपना तप भंग किया। ईश्वर मुझसे क्रोधित हो गया। मुझे तो उसी का आश्रय था और अब उसका पता नहीं चलता। उसे कहीं से खोज निकालना चाहिये।

यह विचार कर रामानन्द अपने स्थान से उठे और सीढ़ी से उतरने लगे। निर्बलता से उनके पैर लड़खड़ाने लगे और सर में चक्कर आने लगा। किन्तु सँभल कर वे नीचे उतर आये। मीनार पर पड़े-पड़े चलने का अभ्यास छूट गया था। अतः कठिनता से चलना आरम्भ किया। कुल क़स्बा सोया पड़ा था। रामानन्द रात भर पागलों की तरह तुग़लकाबाद के खंडहरों और

बीरानों में मीलों तक भटकते और चक्कर लगाते रहे। पिछले पहर वे भूख प्यास से बेदम हो, थक कर नदी किनारे बैठ गये। थोड़ा सा ठंडा जल पिया, कच्चे-पक्के फल वृत्तों में से तोड़ कर खाये। फिर क़िले पर चढ़ना आरम्भ किया। सुबह होते होते वह क़िले पर चढ़ गये और खँडहरों में भटकते एक मक़बरे में पहुँचे। हर तरफ़ कूड़ा-करकट, ईंटों और मट्टी के अम्बार लगे हुए थे। घास-फूस, पत्ते और काँटे चारों तरफ़ नजर आते थे। बिच्छू, साँप और कनखजूरे जा-बजा रेंग रहे थे तथा चिमगादड़ फड़-फड़ाते और उल्लू बोल रहे थे।

रामानन्द ने एक कमरे में पहुँच कर ज़मीन को साफ़ किया और औंधा मुँह करके बड़ी देर तक वहीं पड़े सोचने लगे कि अपनी विनय-प्रार्थना के लिये यही स्थान उचित मालूम होता है। यदि ईश्वर मिलना है, तो यहीं मिलेगा। कुछ दिनों तक रामानन्द दिन भर व रात भर इस कमरे में विनय-प्रार्थना करने, गिड़गिड़ाने और तौबा करने में अपना सब समय व्यतीत करते रहे। एक दिन उनके कान में किसी ने कहा—'उठ, इन प्रासादों के द्वार, दीवारों पर मिटी—मिटाई चित्रकारी देख और उनसे कुछ शिक्षा ले।'

स्वामी जी उठे और मक़बरे से निकल कर प्रासादों में चक्कर लगाने लगे। चित्र बिलकुल जीते-जागते प्रतीत होते थे।

रोज़मर्रा के जीवन की यह जीती-जागती तसवीरें सब ही आश्चर्य्यजनक और मनोहर थीं परन्तु एक सुन्दर और युवावस्था वाली स्त्री का चित्र, जो अपने बालों में फूल बींधे हुए, हाथ में तम्बूरा लिये अपने हाव-भाव दिखला रही थी, विशेष प्रकार से मन को मोहने वाला था। उसके वस्त्र इतने महीन थे कि उसके सब अंग उसमें से चमकते थे। उसके यौवन की छटा फूटी पड़ती थी।

उसका मुख इतना सुन्दर और नेत्र ऐसे नशीले थे कि हृदय को बस में रखना असम्भव था। संक्षेप में चित्र क्या था प्रेम और सौन्दर्य्य की मूर्त्ति थी। स्वामी जी ने इस चित्र को ध्यान से देखा, फिर आँखें नीची करलीं और बोले—"ऐ आकाशवाणी, तू ने मुझे यहाँ क्यों भेजा ? निस्सन्देह, यह चित्र महाराजों और पुराने बादशाहों के भोग-विलास के जीवन का पता देती है। सच तो यह है कि जीवन की अस्थिरता के यह सब चिन्ह हैं, जिनको बुद्धिमान मनुष्य निराशा की दृष्टि से देखेगा और शिक्षा प्राप्त करेगा।"

ज्योंही स्वामी जी शान्त हुए, आकाशवाणी ने फिर कहा—"तू भी मरेगा परन्तु जीवन के सुख, आनन्द से वंचित जीवन की निराशा चिता में भी तेरे साथ जायेगी, मुरदा दिल जिया तो क्या जिया। जीते जी जीने का कुछ आनन्द लूट।"

इस दिन से रामानन्द को फिर एक क्षण का भी चैन न मिला। वही तंबूरे वाली स्त्री का चित्र रह रह-कर उनकी आँखों में फिरता। एक दिन उनके कान में ऐसी आवाज़ आई गोया वह तसवीर बोल और कह रही है—"इधर देखो। तुम मेरे सौन्दर्य और लावण्य से अब तक बेख़बर थे। मुझे प्यार क्यों नहीं करते? तुम्हारा हृदय प्रेम की अग्नि से जल रहा है। इस आग को मेरे आलिंगन से क्यों नहीं बुझाते। तुम मुझसे कब तक भागते रहोगे ? आज तक कोई पुरुष भी स्त्री के सौन्दर्य और यौवन के आकर्षण और जादू से रक्षित न रह सका। गरदन झुका कर ध्यान पूर्वक तुम अपने हृदय में देखो, तो तुम वहाँ भी मेरी ही तसवीर पावोगे। इस युवा ने जो क़बर में कफ़न ओढ़े लेटा है, मुझे अपनी छाती से लगाया था। सदियां गुज़र गईं कि जब मैंने अपने अधरों का रस उसको पान कराया था, परन्तु इस क्षण

वीरानों में मीलों तक भटकते और चक्कर लगाते रहे। पिछले पहर वे भूख प्यास से बेदम हो, थक कर नदी किनारे बैठ गये। थोड़ा सा ठंडा जल पिया, कच्चे-पक्के फल वृक्षों में से तोड़ कर खाये। फिर क़िले पर चढ़ना आरम्भ किया। सुबह होते होते वह क़िले पर चढ़ गये और खँडहरों में भटकते एक मक़बरे में पहुँचे। हर तरफ़ कूड़ा-करकट, ईंटों और मट्टी के अम्बार लगे हुए थे। घास-फूस, पत्ते और काँटे चारों तरफ़ नज़र आते थे। बिच्छू, साँप और कनखजूरे जा-बजा रेंग रहे थे तथा चिमगादड़ फड़-फड़ाते और उल्लू बोल रहे थे।

रामानन्द ने एक कमरे में पहुँच कर ज़मीन को साफ़ किया और औंधा मुँह करके बड़ी देर तक वहीं पड़े सोचने लगे कि अपनी विनय-प्रार्थना के लिये यही स्थान उचित मालूम होता है। यदि ईश्वर मिलना है, तो यहीं मिलेगा। कुछ दिनों तक रामानन्द दिन भर व रात भर इस कमरे में विनय-प्रार्थना करने, गिड़गिड़ाने और तौबा करने में अपना सब समय व्यतीत करते रहे। एक दिन उनके कान में किसी ने कहा—'उठ, इन प्रासादों के द्वार, दीवारों पर मिटी—मिटाई चित्रकारी देख और उनसे कुछ शिक्षा ले।'

स्वामी जी उठे और मक़बरे से निकल कर प्रासादों में चक्कर लगाने लगे। चित्र बिलकुल जीते-जागते प्रतीत होते थे।

रोज़मर्रा के जीवन की यह जीती-जागती तसवीरें सब ही आश्चर्य्यजनक और मनोहर थीं परन्तु एक सुन्दर और युवावस्था वाली स्त्री का चित्र, जो अपने बालों में फूल बाँधे हुए, हाथ में तम्बूरा लिये अपने हाव-भाव दिखला रही थी, विशेष प्रकार से मन को मोहने वाला था। उसके वस्त्र इतने महीन थे कि उसके सब अंग उसमें से चमकते थे। उसके यौवन की छटा फूटी पड़ती थी।

उसका मुख इतना सुन्दर और नेत्र ऐसे नशीले थे कि हृदय को बस में रखना असम्भव था। संक्षेप में चित्र क्या था प्रेम और सौन्दर्य्य की मूर्त्ति थी। स्वामी जी ने इस चित्र को ध्यान से देखा, फिर आँखें नीची करलीं और बोले—"ऐ आकाशवाणी, तू ने मुझे यहाँ क्यों भेजा ? निस्सन्देह, यह चित्र महाराजों और पुराने बादशाहों के भोग-विलास के जीवन का पता देती है। सच तो यह है कि जीवन की अस्थिरता के यह सब चिन्ह हैं, जिनको बुद्धिमान मनुष्य निराशा की दृष्टि से देखेगा और शिक्षा प्राप्त करेगा।"

ज्योंही स्वामी जी शान्त हुए, आकाशवाणी ने फिर कहा—"तू भी मरेगा परन्तु जीवन के सुख, आनन्द से वंचित जीवन की निराशा चिता में भी तेरे साथ जायेगी, मुरदा दिल जिया तो क्या जिया। जीते जी जीने का कुछ आनन्द लूट।"

इस दिन से रामानन्द को फिर एक क्षण का भी चैन न मिला। वही तंबूरे वाली स्त्री का चित्र रह रह-कर उनकी आँखों में फिरता। एक दिन उनके कान में ऐसी आवाज आई गोया वह तसवीर बोल और कह रही है—"इधर देखो। तुम मेरे सौन्दर्य और लावण्य से अब तक बेख़बर थे। मुझे प्यार क्यों नहीं करते? तुम्हारा हृदय प्रेम की अग्नि से जल रहा है। इस आग को मेरे आलिंगन से क्यों नहीं बुझाते। तुम मुझसे कब तक भागते रहोगे ? आज तक कोई पुरुष भी स्त्री के सौन्दर्य और यौवन के आकर्षण और जादू से रक्षित न रह सका। गरदन झुका कर ध्यान पूर्वक तुम अपने हृदय में देखो, तो तुम वहाँ भी मेरी ही तसवीर पावोगे। इस युवा ने जो क़बर में कफ़न ओढ़े लेटा है, मुझे अपनी छाती से लगाया था। सदियां गुज़र गईं कि जब मैंने अपने अधरों का रस उसको पान कराया था, परन्तु इस क्षण

निद्रा में भी उसके होठों की मुस्कराहट कह रही है कि उसने उस क्षण के आनन्द और नशे को अब तक नहीं भुलाया। तुम तो, रामानन्द, मुझे भली भाँति जानते हो। तुमने मुझे पहिचाना नहीं, मैं सुन्दरी के अवतारों में से एक अवतार हूँ। सुन्दरी किसी जन्म में मेनका थी। फिर उसने दमयन्ती का जन्म लिया। अभी, रामानन्द, बहुत समय नहीं बीता कि पद्मिनी होकर नाम किया और अब सुन्दरी का रूप धरा है। तुम पर तो मेरे जीवन का रहस्य तुरन्त ही प्रकट हो जाना चाहिये था, परन्तु तुमको उसका ध्यान न आया। मुझ से न भागो, अब तो तुम जहाँ और जिधर जिधर जावोगे, सुन्दरी तुम्हारा पीछा करेगी।"

रामानन्द घबरा कर सिर धुनने लगे और उनके मुँह से एक चीख़ निकल गई, परन्तु उस चित्र ने उनका पीछा करना न छोड़ा। उसकी वाणी की गूंज उनके कानों में हर रात सुनाई देती और अपने हाव-भाव से वह अपनी ओर बराबर उनको खींचती थी। जब यह इनकार करते तो वह यों समझाती—"प्रियतम, मानते क्यों नहीं ? मुझे प्यार क्यों नहीं करते ? तुम जब तक मुझसे भागोगे, मैं तुम्हारा पीछा करती और सताती रहूंगी। मैं जादूगरनी हूं। मैं तुम्हारी लोथ में नया जीवन फूंक दूँगी और वह आत्मा मेरी दास और भक्त होगी। तुम आकाश और बैकुंठ की ऊँचाई से जब अपने शरीर को पापमय देखोगे, तो तुम्हारी आत्मा स्वर्ग में भी तड़प कर रह जायगी। तुम्हारी काया तुम्हारी आत्मा को प्रलय के दिन वापस मिलेगी। जब वह देखेगी कि इसमें शैतानी आत्मा ने प्रवेश किया है और एक जादूगरनी उस पर अपना क़बज़ा जमाये बैठी है, तो वह भी परेशान होने लगेगी। ईश्वर से भी कुछ करते-धरते न बनेगा। उन बेचारों का दिमाग़

ज़्यादा काम नहीं करता। उनको तो साधारण ही नहीं किन्तु छोटा सा जादूगर धोखा दे सकता है। इससे तो कहीं ज़्यादा दिमाग़ हज़रत इबलीस रखते हैं। देखो, यह किस ग़ज़ब के कारीगर हैं। यदि मुझ में सौन्दर्य और चमत्कार है, तो यह सब हाव-भाव उन्हीं का दान दिया हुआ है। यदि मुझमें मनुष्यों के हृदयों पर राज्य करने की शक्ति और मोहित करने का ढंग है, तो यह उन्हीं का चमत्कार है। सौन्दर्य और प्रेम, कविता और संगीत और चित्रकारी इन सब के मूजिद वही हैं। तुम इन सब बातों के बैरी हो। तुमने अपना जीवन नष्ट कर रक्खा है। तुम ईश्वर के दरबार में विनय प्रार्थना किया करते हो परन्तु अल्लामियां तुम्हारी एक नहीं सुनते। तुम इन झंझटों में मत पड़ो और मेरे मोहने वाले साधू! मुझको शीघ्रता से प्यार कर लो।"

स्वामी रामानन्द जानते थे कि यह जादूगर बड़े बड़े सितम ढा सकते हैं। वह सोचने लगे कि कहीं ऐसा न हो कि यह मनुष्य जो यहाँ गड़ा है, जादू के रहस्यों से परिचित हो और यह सब तमाशा उसी का हो। सम्भव है कि रात्रि के समय क़बर में से निकल मनुष्य का शरीर धारण कर के यह इस स्त्री के साथ रंग-रलियाँ मनाता हो और किसी दिन मुझे चिढ़ाने और तरसाने के लिये मेरे सामने भी बदमस्त होकर आ जावे। यह ख़्याल करके रामानन्द अत्यन्त व्याकुल हुए।

वह इसी उधेड़बुन में रहा करते थे। उनको रात्रि के समय नाना प्रकार की आवाज़ें सुनाई देती थीं और चारों ओर भूत-प्रेत ही दिखाई देते थे। एक रात वह इसी भ्रम और विचार में थे कि आवाज़ आई—"देख और सुन !! आत्मा के सौन्दर्य पर मोहित और मुक्ति प्राप्त करने के इच्छुक कुछ ही लोग होते हैं, अधिक

लोग इन बातों में विश्वास नहीं रखते किन्तु प्रकृति के सौन्दर्य के क़ायल रह कर जीवन के सुख और आनन्द उठा कर अपना हृदय प्रफुल्लित करते हैं। उनका विश्वास होता है प्रकृति ने जो यह सौन्दर्य का बाज़ार लगाया है और मन मोहने वाली भोली सूरतें उत्पन्न की है, वह इसी लिये कि मनुष्य उनको प्यार करके जीवन का सुख भोगे। जीवन से आनन्द उठाना और सुख भोगना पाप नहीं किन्तु पुण्य है। इस निष्पाप से सुख में क्या पाप या बुराई हो सकती है? यह तो हर मनुष्य के लिये न केवल रवा किन्तु उचित भी है।"

रामानन्द यह सुन कर केवल धक से रह गये। उनका दिमाग़ परेशान होने लगा। उनको इस मक़बरे में एकान्त भी चारों ओर शोर व हंगामा ही मालूम होता था। कहीं तो भूत-प्रेत गुल मचाते और ठट्ठे लगाते मालूम होते और कहीं आकाश की परियां, नग्न नाचती हुई दिखाई देती थीं। देव-भूत निडर होकर उनको छेड़ते और दिक़ करते थे।

रामानन्द जब इस दशा से तंग आगये तो स्वयं एक दिन कहने लगे—"हे मन, तू कहाँ कहाँ भटकता फिरता है? तेरी चपलता ने मेरी क्या गति कर दी है?" यह सोच कर उन्होंने इरादा किया कि तबियत को किसी काम में लगाना चाहिये ताकि दिमाग़ को आराम मिले और समय भी किसी प्रकार कटे।

नदी के तट पर केले के वृक्ष लगे हुए थे। रामानन्द ने दो चार को जड़ से गिरा दिया। वे उन्हें अपने स्थान पर उठा लाये व उनके डंठलों से रस्सियां बटनी आरम्भ करदीं। धीरे-धीरे अपनी सफलता से प्रसन्न होकर उन्होंने वृक्षों की छालों, बाँसों की खपचियों, और सिरकियों से चटाइयाँ और टोकरियाँ बनाने का इरादा किया। दस पाँच ही दिन में मक़बरे में चटाइयों, रस्सियों

और टोकरियों के ढेर लगने लगे। भूत-प्रेतों का गुल शोर अब कम होने लगा। तम्बूरे वाली, नाचने वाली भी अब इधर बहुत कम आती थी। स्वामी जी निश्चिन्त हुए, तो साहस बढ़ा और विश्वास ताज़ा होने लगा। कहने लगे—"ईश्वर की दया से मैं अपनी इन्द्रियों को अब बस में ले आऊँगा और मन को भी निश्चल बिठाऊँगा। इस संसार में बस ईश्वर ही का नाम सत्य है और सब माया है। जब कुछ न था, ईश्वर था; जब कुछ न होगा, ईश्वर होगा। मनुष्य को भक्ति-मार्ग से मोक्ष प्राप्त होता है, ज्ञान मार्ग से नहीं। मेरी भक्ति में कोई फ़रक़ नहीं आया, इसलिये मेरी मुक्ति होगी।"

जब तक स्वामी जी रस्सियाँ बटते और चटाइयां बिनने में लिप्त रहते, तब तक दिन भर तो ईश्वर की उन पर कृपा और दया रहती, परन्तु रात को जिस दिन उन्हें नींद न आती उसी दिन ईश्वर अपने भक्त का साथ छोड़ देते और भूत पिशाचों को उनके सताने का मौक़ा मिल जाता।

एक रात उनकी आँख एकाएक खुल गई। उन्हें मालूम हुआ कि कोई बातें कर रहा है। उन्हें ख़्याल हुआ, कि यह उसी युवक की आवाज़ है, जो इस मक़बरे में गड़ा हुआ है। उनका दिल धड़कने लगा। उन्होंने कान लगा कर सुना तो मालूम हुआ कि जैसे कोई बहुत चुपके से किन्तु शीघ्रता से कह रहा है—'मेनका! मेनका!! मेरे साथ आओ। चलो, हम तुम दोनों हम्माम चलें।'

एक औरत ने जिसका मुंह रामानन्द के कान से छू रहा था, उत्तर दिया—'उठूँ तो कैसे उठूँ? यह कमबख़्त साधू मुझे अपनी गोद में लिये पीछे पड़ा है।'

यह सुनते ही रामानन्द को इस बात का ज्ञान हुआ कि उसका सिर किसी औरत के सीने पर है। ध्यान से देखा तो वही

तंबूरे और नाचने वाली रामानन्द की गोद से उठने लगी। साधू मस्त और मतवाला होकर उसके गबदे और महकते हुए शरीर से चिमट कर कहने लगा—"ऐ चम्पक वदनी ! ऐ मृगनयनी ! ठहर, तनिक और ठहर।"

तंबूरे वाली हँस कर बोली—"मैं नहीं ठहरती। क्यों ठहरूं ? तेरे से सौदाई और पागल को मस्त करने के लिये तो मेरा चित्र और छाया ही काफ़ी है। अब तो तू पापी हो चुका और क्या चाहिये।"

इसके बाद रामानन्द रात भर विनय प्रार्थना करते रहे। जब प्रातःकाल हुआ तो उन्होंने प्रार्थना की—"यदि ईश्वर ने मुझे भुला दिया, तो हे देवताओ ! तुम्हीं मेरी सहायता करो। तुम देखते हो कि मुझ पर कैसा कठिन समय पड़ा है। देवताओ ! तुम्हीं मुझ पर तरस खाओ।"

रामानन्द रो रो कर यह कह रहे थे कि एक ओर से बड़ी व्यंग-पूर्ण हँसी की आवाज़ आई और किसी ने मुंह चिढ़ा कर कहा—'रामानन्द, तू तो अब नास्तिक हो गया।'

यह सुनते ही रामानन्द पटखनी खाकर गिरे और बेहोश हो गये। होश में आने पर रामानन्द ने देखा कि उसके सिरहाने और दायें-बायें कई साधू बैठे हैं। कुछ उसके मुख पर पानी के छींटे देते और मंत्र पढ़ते जाते थे।

उनमें से एक बोला—"हम लोग इस जंगल से जा रहे थे। इस गुम्बद की ओर से बुरे प्रकार की आवाज़ें निकलती सुनाई दीं। यहाँ पहुँचने पर हमने तुमको बेहोश पाया। मालूम होता है, भूत-पिशाचों ने तुमको चिमट कर गिरा दिया था।"

रामानन्द—"मित्रो ! तुम कौन हो और कहाँ जाते हो ?"

हरदेव—"भाई, हमारे गुरू सन्त साईंदास को मालूम हुआ है कि अब उनका चोला छूटने वाला है। वे अब समाधि छोड़ कर पर्वतों की खोह से उतर आये हैं। हम सब साधू—बैरागी उनसे आशीर्वाद लेने के लिये जा रहे हैं। आश्चर्य्य है! साधू हो कर तुम को इस बात की सूचना नहीं मिली।"

रामानन्द—"मैं पापी इस योग्य नहीं था। समाचार कौन देता? यहाँ तो सिवाय भूत-प्रेतों के और कोई दिखाई नहीं देता। तुम मित्र लोग मेरे लिये सहायता की प्रार्थना करो। मैं स्वामी रामानन्द हूँ।"

हरदेव—"क्या आप ही स्वामी रामानन्द हैं, जिनके नाम की चर्चा हर मनुष्य की जिह्वा पर है? आपने तो ईश्वर की बड़ी सेवा की है। आप ही ने तो सुन्दरी को ईश्वर का मार्ग दिखाया और खम्भे पर चढ़ कर बड़ी तपस्या की। आपके जाने के बाद कृष्णमाचार्या ही खम्भे पर आपके स्थान में जा कर बैठा था, परन्तु वह बावला साधू 'ऊधो' कृष्णाचार्या के कथन को काटता रहा और कहने लगा कि आप को भूत पिशाच चिमट गये और भगा ले गये। लोगों को उसकी बात सुन कर बड़ा क्रोध आया और उस पर पत्थर फेंके, पर वह भाग कर बच गया। मैं आपका दास हरदेव हूँ।"

रामानन्द—"नहीं भाई, मुझ पर ईश्वर की कृपा नहीं है। मुझ पर तो बड़ा बुरा समय गुज़र रहा है। मैं तो ईश्वर को बराबर ढूंढ रहा हूं, परन्तु ईश्वर ने मेरी आँखों पर पर्दा डाल रक्खा है।"

हरदेव—"कृष्णाचार्या ने तो देखा था कि देवताओं ने आप पर फूल बरसाये और आपको विमान पर बिठा कर ले गये। आप लौट आये होंगे!"

रामानन्द ने इरादा कर लिया कि इन साधुओं के साथ अपने गुरू साईंदास जी के अंत समय दर्शन करके उनका आशीर्वाद लें। वे उनके साथ हो लिये। दोनों साधुओं में बातें होने लगी।

रामानन्द—"ईश्वर सत्य की तरह एक और अटल है। संसार अनेक अनेक प्रकार का है और इस कारण तुच्छ और माया है। हम को इस संसार रूपी माया से, चाहे वह कैसी भोली-भाली मालूम हो, दूर भागना चाहिये। यह मन बड़ा चंचल होता है और इसको जब तक हर दम बस में नहीं रक्खोगे, न मालूम कब धोखा दे जाय। स्त्री तो मनुष्य को सत्यानाश करने को बनाई गई है। वे लोग बड़े भाग्यवान हैं जो इस संसार रूपी माया की ओर से बहरे, अंधे और गूँगे हो जाते हैं। उनको ही ईश्वर का ज्ञान होता है।"

हरदेव—"महाराज, आपने अपने अन्तःकरण की बात मुझे कह सुनाई। अब मैं भी आपको अपने पापी जीवन का हाल बताता हूं। साधू होने के पहले मेरा जीवन बड़ा पतित था। मैं रोज़ मदिरा में मस्त हो वेश्याओं के कोठों पर रातें व्यातीत करता था। मैं इस दीवानी जवानी के हाथों अंधा हो रहा था। जब मैं अपना रुपया-पैसा सब उड़ा चुका और मुझको दरिद्रता ने घेरा तो मेरी आँखें खुलने लगीं। इन्हीं दिनों मेरे एक साथी को मदिरा ने ऐसा खराब किया कि उसके हाथ पैर लुंज हो गये। आँखों से वह अन्धा हो रात दिन हाय-हाय किया करता था। उसकी दुर्दशा देख कर मुझको बिलकुल होश आ गया और उसी दम से मैंने घर बार छोड़ कर साधुओं की शरण ली और फ़क़ीर हो गया। अब बीस वर्ष से बड़े आनन्द से जिंदगी व्यातीत होती है।"

यह सुन कर रामानन्द ने आकाश की ओर देखा और दिल ही दिल में कहने लगे—'हे ईश्वर! तेरी माया अपरम्पार है। तूने

इस पापी दुष्ट पर अपनी कृपा कर रक्खी है और मेरी ओर से, जो सदा तेरी आज्ञा मानता रहा है, मुंह फेर लिया है। तेरा न्याय अनोखा है। तेरी बातें समझ में नहीं आतीं।'

स्वामी रामानन्द और हरदेव बैरागी बातें करते चले जा रहे थे कि हरदेव ने उंगली के इशारे से स्वामी जी को दिखाया कि यमुना के तट पर सहस्त्रों साधू, सन्तों और बैरागियों की भीड़ लगी हुई है और यह सब संत साईंदास जी के दर्शन करने और उनका आशीर्वाद लेने की ग़रज़ से एकत्रित हुए हैं। जब समीप पहुँचे, तो देखने में आया कि सैकड़ों साधू और सन्यासी डंड कमंडल लिये बाक़ायदा क़तार बाँधे खड़े हैं। उनके बाद बैरागी थे। उनके भी पीछे संड-मुसंड नागों की भीड़ और सब से पीछे सैकड़ों महन्त पुजारी और पंडे अपनी टोली बाँधे सन्त साईंदास जी के दर्शनों की अभिलाषा में प्रतीक्षा कर रहे हैं।

एक ओर सन्त साईंदास जी दृष्टि गोचर हुए। एक सौ पाँच वर्ष की अवस्था, शरीर का एक एक रोंआ सफ़ेद, दाढ़ी नाभि तक पहुँची हुई, बालों की जटाएं कमर से नीची परन्तु कमर कहीं से झुकी नहीं थी। मुख पर तेज और आंखों से ओज टपकता था। दो साधू उनके दाएं-बाएं सहारा देने के अभिप्राय से साथ थे।

सन्त साईंदास जी के आते ही—"गुरूदेव जी की जय" "सन्त साईंदास की जय" की गूंज उठी। सन्त साईंदास जी सब को आशीर्वाद देते हुए पंक्ति के पास से गुज़रने लगे। जब वे नागों, बैरागियों, महन्तों और गुरुओं के पास से गुज़रे तो बोले—"बाबा, तुमने तो ईश्वर की सेवा के लिये बड़ी सेना इकट्ठा की है। तुम्हारी पदवी सेनापति की है।" वे भक्त ईश्वर दास को देखते ही बोले—"ईश्वर का ऐसा सच्चा भक्त और

ऐसा दास तुम में से और कौन है ? इसके प्रेम और भक्ति के आगे सीस नवाओ। ”

स्वामी रामानन्द भी अपने चेलों को लिये हुए प्रतीक्षा कर रहे थे। जब सन्त साईंदास उनके सामने से गुज़रे तो स्वामी रामानन्द ने आगे बढ़ कर उनसे कहा—“ गुरुदेव, मेरी सहायता करो। मैंने ईश्वर की बड़ी सेवा की है। सुन्दरी को घोर पाप से निकाल कर ईश्वर की राह पर लगाया है। खम्भे पर चढ़ कर कई मास तक कठिन तपस्या की है। परन्तु ईश्वर मुझे भुलाये हुए हैं। आपकी कृपा दृष्टि हो जाय तो मेरा उद्धार हो।”

सन्त साईं दास ने रामानन्द के यह वाक्य सुने, परन्तु कुछ उत्तर न दिया और उनके चेलों की ओर दृष्टि डाल कर किसी को ढूंढने लगे। जब ‘ ऊधो ’ भक्त पर उनकी दृष्टि पड़ी, तो संकेत से उसे बुलाया।

रामानन्द के सब शिष्य चकित हो देखने लगे। सन्त सांईं दास ने कहा—“ तुम में से सब से अधिक भक्ति और ज्ञान ऊधो भक्त में है। ऊधो भक्त, अपनी आंखे ऊंची करो और बताओ कि आकाश में तुमको क्या दिखाई देता है ? ”

ऊधो भक्त के चेहरे से इस समय तेज टपक रहा था। उसने आँखें ऊँची की और बोला—“मुझ को आकाश में एक सुवर्ण का सजा सजाया विमान दिखता है। तीन देवियां उसकी रक्षा कर रही हैं कि उसके अतिरिक्त जिसके लिये विमान भेजा गया है, उसमें कोई और न जा सके। ”

रामानन्द यह सुन कर प्रसन्न हुए और सोचा कि आख़िर कार ईश्वर ने प्रसन्न होकर यह विमान उनको देव लोक पहुँचाने के लिये भेजा है। वे ईश्वर को धन्यवाद देने लगे। सन्त साईंदास ने उनको चुप रहने का संकेत किया। ऊधो भक्त ने फिर कहा—

" यह तीनों देवियां मुझ से कहती हैं, कि एक संत चोला छोड़ने वाला है और यह विमान उसके लिये भेजा गया है। संत का नाम सुन्दरी देवी है और तीनों देवियों का नाम धर्म, भय और भक्ति है। "

सन्त साईंदास ने फिर पूछा—" बच्चा, तुझे कुछ और भी दिखाता है ? "

ऊधो भक्त ने अपनी आँखें आकाश की तरफ़ से हटा कर धरती की ओर कर चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। जब उसकी दृष्टि रामानन्द पर पड़ी, तो उसका मुख पीला पड़ गया। उसका बदन थरथराने लगा और आँखों से चिनगारियां निकलने लगीं और बोला—'मुझे तीन दैत्य दिखाई देते हैं। यह बहुत ख़ुश ख़ुश नज़र आते हैं कि इस मनुष्य को पकड़ कर ले जायेंगे। इन तीनों के नाम जलते हुए अंगारों की तरह उनके मस्तक पर लिखे हुए हैं। एक अहंकार, दूसरा शंका और तीसरा कामदेव है। बस मुझे, कुछ और नहीं दिखाई देता। "

यह कह कर ऊधो भक्त अपने स्थान पर चला गया और रामानन्द और उनके शिष्य निराश होकर संत साईंदास की ओर देखने लगे।

संत साईंदास बोले—" ईश्वर ने अपनी आज्ञा सुना दी। उसके आगे मस्तक नवाओ और शान्ति रक्खो। " यह कह कर सन्त साईंदास आगे बढ़ गये। रामानन्द के कानों में केवल एक ही वाक्य की ध्वनि गूंज रही थी कि " सुन्दरी मर रही है। " यह विचार कर कि मृत्यु बहुत शीघ्र सुन्दरी की आँखें सदा के लिये बंद कर देगी उसके आश्चर्य और निराशा की कोई सीमा न रही थी। सहसा रामानन्द छलांग मार कर झपटे और ज़ोर से दौड़ने लगे।

"सुन्दरी मर रही है" इसका क्या अर्थ। इन शब्दों का आकार तो भयानक है। यदि सुन्दरी मर रही है, तो आकाश क्यों खड़ा है? धरती क्यों नहीं फट जाती? बिजलियां क्यों नहीं गिरतीं? यह फूल क्यों नहीं मुरझाते? नदी नाले अभी तक क्यों नहीं सूखे? यदि सुन्दरी मर रही है, तो संसार क्यों क़ायम है? इसको अब किस की मृत्यु की प्रतीक्षा है?

"सुन्दरी मर रही है" तो एक दृष्टि देख तो लूँ। उससे एक बार मिल तो लूं। यद्यपि रामानन्द इस समय होश में नहीं था और वह नहीं जानता था कि वह कहाँ जाना चाहता है और किधर जा रहा है परन्तु उसका शोक़ उसको उसी राह लिये जा रहा था, जिधर बाई का स्थान था। रामानन्द शोकाकुल और क्रोधान्ध होकर इस समय आपे से बाहर था और उसके नेत्रों से लोहू टपक रहा था।

हाय! री मूर्खता! कोई तेरा अन्त है। जब तक प्रेम मिलन का अवसर था, मैं टालता रहा। अब जब कि समय हाथ से निकल गया तो निराशा से हाथ मल रहा हूं। सुन्दरी पर दृष्टि डाल कर उसके जादू भरे नयनों का शिकार होकर फिर भी यह विचार करना कि संसार में उसके अतिरिक्त कुछ और भी था मूर्खता थी। मैं ईश्वर के विचार में था। मुक्ति के स्वप्न देखता थ जैसे सुन्दरी के सामने उनकी कुछ वास्तविकता थी। हाय मुझे यह भी समझ में न आया कि प्रिये के एक चुम्बन में जो आनन्द है, वह मुक्ति में कहां; क्योंकि मुक्ति तो एक कल्पना की बात है और उसका आनन्द मैं चाहता तो उठा लेता। तो मैंने ऐसा क्यों न किया? ईश्वर के भय से। सुन्दरी को देख कर ईश्वर से क्या डरना। ईश्वर क्या है? स्वर्ग और नरक क्या है? क्या उनकी सुन्दरी के सामने कुछ हक़ीक़त है? यदि ईश्वर की

दया कहीं है तो सुन्दरी के अधरों में। परन्तु मेरी आँखों पर तो जैसे किसी ने पट्टी बांध दी थी। वह अपनी छाती पर से आँचल हटा कर, अपनी गोरी गोरी बांहें मेरी ओर फैला कर मुझे अपनी गोद में लेने को तैय्यार थी परन्तु मैं मूर्ति बना खड़ा रहा। यदि मैं मैं ऐसे प्रेम-मिलन का रस चख लेता तो मैं ईश्वर से कह सकता था कि चाहे तू मेरी पसलियां चूर चूर कर दे, मेरे शरीर को भस्म कर दे, मेरे लोहू को सुखा दे, पर तू उस आनन्दमय क्षण को जब मैं सुन्दरी से आलिंगन कर रहा था मेरी स्मृति से नहीं मिटा सकता। जब तक हिस बाक़ी है उसकी याद तरोताजा रहेगी। " सुन्दरी मर रही है। वह अब मेरी नहीं हो सकती, किसी तरह नहीं हो सकती " यह सोचते विचारते उसके विचार ने एक और करवट ली और वे कहने लगे—' औरों ने तो इसके प्रेम का रस चखा, इसके यौवन का आनन्द लूटा परन्तु मैं ही असफल रहा। इसने तो अपने यौवन की नदी बहा रक्खी थी ; न मालूम किसने किसने उससे आनन्द लूटा, पर मैं ही बंचित रहा।' क्रोध में आकर उहोंने छाती पीट ली और दांतों से हाथों को चबाने लगे। क्रोध शान्त होने पर वह रोने लगे पर ज्योंही उसे याद आया कि मर रही है, वह फिर तड़प कर बेचैन हो गया और बोले—" सूर्य के सुन्दरी प्रकाश, तारों भरी रात की छांव ऐ धरती व आकाश प्रकृति के जीव-जन्तुवों तुम सुनते हो कि नहीं सुन्दरी, मर रही है। सूर्य, तू अस्त क्यों नहीं हो जाता, वायु तू चलना क्यों नहीं बन्द करती, ऐ प्रकृति तू इस शोक में ग़ायब क्यों नहीं हो जाती। ईश्वर तेरे नाम पर धिक्कार है ; तू सुनता है कि नहीं अब तो तू मुझे नरक भेजेगा। भेज दे ताकि मैं नरक में जल कर इस क्रोध की अग्नि को जो मेरा कलेजा फूँके देता है शान्त कर सकूं। "

दूसरे दिन प्रातःकाल रामानन्द बाई के स्थान पर पहुंचे। बाई

ने साधू का बड़ा सत्कार आदर करके स्वागत किया और बोली—"बाबा, तुम यह सुन कर आये होगे कि सुन्दरी को ईश्वर बुलाने वाला है और वह यह चोला छोड़ने वाली है। यह समाचार सच है। वह ईश्वर की भक्त और उसकी प्यारी है। इसी कारण ईश्वर उसे अपने पास बुलाना चाहते हैं। जब तुम उसको कोठरी में बन्द करके चले गये तो मैं उसको रोटी साग और पानी रोज़ भिजवा देती थी। इसके साथ मैंने उसको एक बांसुरी भी भिजवा दी थी कि वह भगवत भजन गाकर अपने तईं और ईश्वर को प्रसन्न किया करे। पूरे साठ दिन के बाद कोठरी का ताला अपने आप खुल गया जिससे मैंने जाना कि ईश्वर ने उसके सब पाप धो डाले और अब उस पर ईश्वर की दया हो गई। तब से सुन्दरी हम सब लोगों के साथ ख़ुश ख़ुश रहने लगी। बाबा, तुम उनको अपना आर्शीवाद देने आये हो, तो फिर चलो उसको जल्दी चल कर देख लो, क्योंकि ईश्वर पल—घड़ी में उसको अपने पास बुलाया ही चाहता है।

रामानन्द आँगन में पहुँचे, तो उन्होंने सुन्दरी को एक चार-पाई पर बिलकुल शांत लेटे देखा। उसका मुख सर्वथा सफ़ेद हो रहा था। शरीर सूख कर कांटा हो गया था केवल ढाँचा ही ढाँचा नज़र आता था, परन्तु उसके मुख पर अब भी तेज था और उसके सौन्दर्य में कुछ अंतर नहीं पड़ा था।

रामानन्द ने पहुंचते ही आवाज़ दी—'सुन्दरी'! उसने आँखों की पुतलियों को फेर कर जिधर से आवाज़ आई थी उधर देखा। रामानन्द ने फिर आवाज़ दी—"सुन्दरी", तो सुन्दरी ने गर्दन उठाई और रामानन्द की ओर देख कर कहा—"साधू बाबा, तुम हो! तुम्हें याद है कि राह चलते चलते एक संध्या को हमने नदी किनारे बैठ कर साग और रोटी खाई थी और ठण्डा जल

पिया था। उसी दिन से मेरे हृदय में भक्ति का का उत्पन्न हुआ और तब ही से अमरत्व में मैं विश्वास करने लगे।"

यह कह कर वह चुप हो गई और थक कर अपना सिर फिर उसने तकिये पर रख लिया। योगिनें और वैरागिनें जो उसके चारों ओर खड़ी थीं, भजन गाने और श्लोक पढ़ने लगीं। एका-एक सुन्दरी उठ बैठी और आंखें खोल कर आकाश की ओर ध्यान पूर्वक देखने लगी और बोली—'देखो, वह देखो, स्वर्ग नज़र आता है।"

इस समय उसका मुख दमक रहा था, आंखें चमक रही थीं। सुन्दरी वास्तव में बड़ी सुन्दर प्रतीत होती थी। रामानन्द ने बेचैन होकर अपनी बाहें उसकी गर्दन और कमर में डाल दीं और अजीबो-ग़रीब आवाज़ में, जिसका पहचानना उसके लिये स्वयं कठिन था कहने लगे—"सुन्दरी, प्यारी सुन्दरी, तुझे मैं दिलोजान से चाहता हूँ। तू जान क्यों देती है। मर नहीं। हाय, मैंने तुझे धोखे में रक्खा। सच तो यह है कि मैं स्वयं धोखा खा रहा था। ईश्वर, स्वर्ग, मोक्ष यह सब बातें ही बातें हैं, हवाई बातें उनकी कुछ असलियत नहीं। यदि जीवन में कुछ है तो प्रेम की मदिरा के नशे का सुरूर है। सुन्दरी, मैं तुझ पर जान देता हूं। तू अपनी जान मत दे। मेरे साथ चल, मैं तुझे अपनी गोद में ले चलूंगा और फिर हम दोनों प्रेम की मदिरा में मग्न होकर जीवन का आनन्द लूटेंगे। सुन्दरी, प्यारी सुन्दरी उठ बैठ।"

सुन्दरी ने रामानन्द की एक बात भी न सुनी वह धीरे धीरे कहने लगी—"देखो, स्वर्ग दिखाई देता है। देवता मेरे लिये विमान लाये हैं। ईश्वर मुझे बुला रहा है। मैं उस विमान पर बैठ कर जाती हूं। स्वर्ग लोक तो वास्तव में बड़ी अच्छी जगह है, देवी-देवता बड़े सुन्दर। हैं यह लो, मुझे तो ईश्वर ही दर्शन दे रहे हैं।

मुझे तो उनके दर्शन हो गये।" यह कहकर सुन्दरी बिछौने पर गिर पड़ी और उसकी आँखें बन्द हो गई और वह इस असार संसार से चल बसी।

रामानन्द ने, जो अपने हवास में न था, सुन्दरी का आलिंगन कर लिया। उसके सिर पर उस समय शैतान सवार था। बाई ने यह देख कर क्रोध से कहा—"दूर हो दुष्ट, यहां से दूर हो।' यह कह कर बाई ने सुन्दरी की आँखों को बन्द कर दिया और योगिनें और वैरागिनें भजन और श्लोक पढ़ने लगीं। इसी बीच में दो एक की दृष्टि रामानन्द पर पड़ी, तो वह डर कर चीख उठी और इससे दूर भागने लगी। एक बोली—"भूत है, भूत।" और असलियत यही थी कि रामानन्द की सूरत इस समय ऐसी भयानक हो गई थी कि उसकी ओर देखने से घृणा और भय प्रतीत होता था।

ऋषि-मुनियों का प्रसाद, स्वास्थ्य, सामर्थ्य तथा दीर्घायु-
प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन, स्त्री-पुरुष तथा बाल,
युवा और वृद्ध सब के करने योग्य व्यायाम
शिक्षा की अभूत पूर्व सचित्र पुस्तक

सूर्य-नमस्कार

व्यायाम का महत्व किसी से छिपा नहीं है। बलवान व्यक्ति का संसार आदर करता है और एक सम्पत्तिशाली वैभव संपन्न किन्तु रोगी भूपेन्द्र से एक स्वस्थ्य और बलवान भिखमंगा लाख गुना सुखी रहता है। स्वास्थ्य-हीन वैभव किसी काम का नहीं। जीवन का सुख भोगने के लिये शरीर का स्वस्थ्य होना बहुत ही आवश्यक है और बिना व्यायाम के स्वास्थ्य दुर्लभ है। लीजिये, ऋषि मुनियों के इस अनुपम प्रसाद को पाइये और जीवन का सच्चा सुख भोगिये।

व्यायाम-विशारद तथा डाक्टरों का यह कहना है कि किसी तरह की साधारण कसरत शरीरों के सब अंगों पर असर नहीं डाल सकती। शरीर के अंदर कुछ ऐसे सूक्ष्म और महत्वपूर्ण अंग हैं, जिन पर इन कसरतों का ज़रा भी असर नहीं हो पाता। अतः, वे अंग सुप्त तथा सुस्त अवस्था में पड़े रहते हैं और इसी-लिए, अमरीका के सुविख्यात डाक्टर मैक फैडन का कहना है कि "हम लोग पूर्ण रूप से जीवित नहीं हैं।" इन सूक्ष्म अंगों के जागृत करने के लिए ही प्राणायाम और बीज मंत्रों

के उच्चारण की जरूरत है। ये दोनों बातें इस सूर्य-नमस्कार में मौजूद हैं। बस, सूर्य-नमस्कार-व्यायाम का ही महत्व है कि यह हमारे उन सूक्ष्म अंगों को जगाता है, जिन के जाग उठने से महान शक्ति पैदा होती है और हम पूर्ण रूप से जीवित बनते हैं।

आज ही इस पुस्तक की एक प्रति खरीद लीजिये। सुन्दर सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल १॥)

पता—मेनेजर, 'लीडर' प्रेस, इलाहाबाद।